प्रेस,
प्रयाग

सन १९४३

मूल्य १॥)

मुद्रक
प्रतापनारायण चतुर्वेदी
भारतवासी प्रेस, दारागंज—प्रयाग

लेखक का वक्तव्य

वर्तमान भूतोदधि-विनिर्गत तीर भूमि है। वर्तमान के तट पर निवास करने वालों के लिए भूत से सम्बन्ध विच्छेद करने में लाभ नहीं है। भूतकाल के अनुभव आधार पर ही एक सुन्दर भविष्य-भवन निर्माण किया जा सकता है। साहित्य मानवी-हृदयगत भावों का स्थायी कोष है। साहित्य ही भूत और वर्तमान की विचार शृङ्खला में अटूट सम्बन्ध स्थापित करता है। अतः वर्तमान-निवासी मानव का यह एक कर्तव्य हो जाता है कि अतीत के साहित्य का परिशीलन करे क्योंकि उसी में उसके पूर्वजों की विचार पयस्विनी विलास कर रही है। पंचत्व-प्राप्त पूर्वजों के पास तक पहुँचने, उनके चरणों में बैठकर उनसे विचार विनिमय करने का पूर्ण अवसर प्राचीन साहित्य के पठन पाठन से ही प्राप्त होता है।

ब्रज-भाषा मधुरतम भाषाओं में गिनी जाती है। एक समय था जब ब्रज भाषा का साहित्य साम्राज्य पर पूर्ण रूपेण आधिपत्य था; सर्वत्र उसकी तूती बोलती थी; विदेशी विद्वान् ब्रज-वीथियों में मातृ-अनुगता कन्याओं के भोले भाले मुख से निसृत ब्रज-भाषा के एक वाक्य में काव्य का पूर्ण लालित्य और रसालत्व प्राप्त कर मुग्ध होते थे। **"सबै दिन जात न एक समान।"** ब्रज-भाषा का वैभव भी भूत की वस्तु बन गया। किन्तु भूत की स्मृति मधुर होती है, तीर भूमि की भाँति हमारी स्मृति भी अतीत के अगाध सागर में अतल स्पर्शिनी बन जाती है। भूत कालिक उस स्मृति के नोदन से ही वर्तमान के यथार्थता के संग्राम में कुछ विनोद हो सकता है। अतः हिन्दी-साहित्य प्रेमियों का ब्रजभाषा से सम्बन्ध बना रहे इसीलिए प्रस्तुत संग्रह उप-स्थित किया गया है।

मिलेगा। सूदन शब्दों को अपने छन्द के अनुसार छोटा बड़ा करने में बड़े सिद्धहस्त हैं। पाठकों को गाजीउद्दीनखाँ के नाम के साथ किये गये खिलवाड़ का परिचय मिलेगा तो तनिक भी अनुचित न होगा।

इस प्रस्तुत संग्रह को उपस्थित करने में मुझे मेरे परम मित्र श्रीगोपालप्रसादजी व्यास साहित्य रत्न से अत्यन्त उत्साह और सहायता प्राप्त हुई है। इस संग्रह को प्रस्तुत करने का पूर्ण श्रेय उन्हीं को है अतः मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। 'भारतवासी प्रेस' दारागंज के अध्यक्ष पं० प्रतापनारायणजी चतुर्वेदी का भी आभार मेरे ऊपर उतना ही है। इसके साथ साथ और भी अन्य महानुभावों का जिनसे मुझे किसी भी प्रकार की सहायता मिली है मैं खुले हृदय से आभार स्वीकार करता हूँ क्योंकि वे सभी धन्यवादास्पद हैं। संग्रह कार्य के सम्पादन में मैंने काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित सुजान चरित्र के द्वितीय संस्करण से सहायता ली है; अतः मैं उक्त सभा और माननीय सम्पादक के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। कहीं कहीं पर मैंने अपनी समझ से ही इतर मार्ग का अवलम्बन किया है। आशा है सहृदय पाठक मुझे इसके लिए क्षमा करेंगे और इसके दोषों को ध्यान में न रखकर अपनायेंगे और मेरे परिश्रम को सफल करेंगे।

इटावा
आश्विन शुक्ल १०, २०००

लेखक
'सत्यप्रिय'

कवि-काव्य-परिचय

श्रीसूदनजी ने ग्रन्थारम्भ में मंगलाचरण—जिसमें 'गकार' से प्रारम्भ होनेवाले शब्दों का ही प्रयोग है—के अनन्तर प्रथम संस्कृत कवियों तथा महर्षियों की वंदना की है, तदुपरान्त हिन्दी के अनेक कवियों का नामोल्लेख किया है; किन्तु इन कवियों के नामोल्लेख में काल-क्रम का ध्यान नहीं रक्खा गया है। ये नाम संख्या में एक सौ पचहत्तर हैं। ये कवि सूदन के परवर्ती या समकालीन रहे होंगे। इनमें बहुत से कवियों के नाम नितान्त अप्रसिद्ध हैं। इस कवि-नाम-संकीर्तन के उपरान्त कवि ने एक सोरठे में अपना परिचय दिया है। वह सोरठा इस प्रकार है:—

मथुरापुर सुभ धाम, माथुर कुल उतपत्ति वर।
पिता वसंत सुनाम, सूदन जानहु सकल कवि॥

इस सोरठे से तो केवल इतना ही ज्ञात होता है कि यह मथुरा के किसी चौबे वंश में उत्पन्न हुए थे और इनके पिताजी का नाम वसं था। इस सोरठे के अतिरिक्त कवि ने सम्पूर्ण काव्य के किसी भी प्रसं में एक पंक्ति भी अपने विषय में नहीं कही और न इन्होंने किस स्थान पर अपना जन्म संवत ही दिया है; किन्तु अपने आश्रय श्रीसुजा सिंह—सूरजमल—के चरित्र वर्णन के लिये लिखे गये सुजान-चरित्र काव में इन्होंने महाराज द्वारा संवत् १८०२ से संवत् १८१० तक लड़े ग सात युद्धों का सविस्तर वर्णन किया है।

युद्धों का वर्णन पढ़ने से ऐसा प्रतीत होता है मानो कवि तत्त युद्ध का निरीक्षण करता हुआ किसी पार्श्ववर्ती पुरुष को उनका वर्ण सुनाता जाता है अर्थात् कवि का वर्णन पूर्ण फोटोग्राफिक (चैत्रिक है। हमारे इस कथन का तात्पर्य यह है कि कवि महाराज सुजानसिंह के साथ-पृथ्वीराज के साथ कवि चंद की भाँति-युद्ध स्थल में अवश

२—सं० १८०४ में दक्खिनी दलों (मराठों) को परास्त करने में जयपुराधीश ईश्वरसिंह की सहायता दी।

३—सं० १८०५ में दिल्ली दल जो सलावतखाँ बख्शी की अधीनता में भरतपुर पर आक्रमण करने आया था परास्त किया गया।

४—सं० १८०६ में पठानों को परास्त करने में दिल्ली के वजीर सफदर जंग की सहायता की।

५—सं० १८०९ में दिल्ली के बादशाह की आज्ञा से घासहेरे के रावबहादुरसिंह बड़गूजर को हराया।

६—सं० १८१० में सफ़दर जंग की सहायता देने के लिए दिल्ली पर आक्रमण किया और उसे खूब लूटा।

७—सं १८१० में दिल्ली की सेना ने मल्हारराव और आना (मराठों) की सहायता ले कर भरतपुर पर आक्रमण किया।

यदि **'जाने दिलीदल दक्खिनी कीने महाकवि काल हैं'** के आधार पर सुजान चरित्र को संवत् १८१० के बाद की रचना स्वीकार किया जाय वह भी असंगत है क्योंकि युद्ध की तालिका जो ऊपर दी गई है उससे विदित होता है कि सुजानसिंह ने सं० १८०४ में दक्खिनी दलों को परास्त किया है और सं० १८०५ में दिल्ली दलों को हराया है। मिश्रबन्धु के तर्क से भी सं० १८०५ और संवत् १८१० के मध्य की रचना मानी जा सकती है। इसके रचना काल की अन्तिम सीमा सं० १८१० इस कारण मानना पड़ता है कि संवत् १८१० की प्रारम्भ घटना जिसका वर्णन कवि ने सप्तम जंग के रूप में प्रारम्भ कर दिया और जिसका परिणाम सं० १८११ में नायक के पक्ष ही में निकलता है—अधूरी जोड़ दी गई है। इससे तो यही तात्पर्य निकलता है कि इस समय अवश्य ही कवि के ऊपर कोई जीवन सम्बन्धी लाचारी आ पड़ी है जिसने कवि को अपने नायक के स्वाभिमान-रक्षक घटना का भी

वर्णन बंद करने के लिए बाध्य किया है। मृत्यु के अतिरिक्त और कोई अन्य घटना मस्तिष्क में स्थान ही नहीं पाती है।

उपर्युक्त अवतरणों के लेखकों की ओर से यह भी तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि कवि ने संवत् १८१० के दस-पंद्रह वर्ष बाद लिखना प्रारम्भ किया और वर्णन करते करते जिस समय सं० १८१० की घटना पर आया तो काल का कठिन निमंत्रण आ गया और यह घटना लाचार होकर अधूरी छोड़नी पड़ी। इसके विरुद्ध हमारा यही कहना है कि कवि का वर्णन गत युद्धों का इतना चैत्रिक न होता जितना है।

अतः इससे यही निष्कर्ष निकला कि कवि का समय लगभग सं० १७७५ से सं० १८१० तक मानना पड़ेगा। संवत् १७७५ इस कारण निश्चित किया गया है कि संवत् १८०२ तक जब कि सुजानसिंह को युद्ध करने जाना पड़ा कवि अवश्य ही युवावस्था में पहुँच चुका होगा।

सुजान-चरित्र पूर्ण ऐतिहासिक चरित्र को ले कर लिखा गया है और उसकी ऐतिहासिक घटनाओं के वर्णन में कवि ने अतिरंजना का तनिक भी आश्रय नहीं लिया इसलिए वर्णन विशेष रुचिकर नहीं बन पड़ा है केवल वस्तु-परिगणना मात्र है। इस कारण सुजान चरित्र काव्य से अधिक इतिहास है। किन्तु कोई यह न समझे कि सुजान-चरित्र छन्द-बद्ध इतिहास ही इतिहास है वह काव्य है ही नहीं सो बात नहीं है। उसमें काव्य के गुण भी वर्तमान हैं। उसके गुणों का अवलोकन कुछ आगे करेंगे। यहाँ पर उसकी कमियों का दिग्दर्शन करते हैं।

किसी भी काव्य ग्रन्थ का शरीर भाषा होती है। पाठक के ऊपर भाषा का वही प्रभाव पड़ता है जो सुन्दर और सुगठित शरीर अथवा कुरूप और वक्र शरीर का पड़ता है। अर्थात् सौंदर्य युक्त शरीर सभी के चित्त को आकृष्ट कर प्रसन्न करता है और उसके विपरीत कुरूप और वक्र अवयव वाले शरीर की ओर आकृष्ट होना तो दूर रहा

उसकी ओर कोई आँख उठा कर भी नहीं देखता; और यदि किसी गुण के कारण देखता है तो कुछ मुँह बनाकर। सुजान-चरित्र की भाषा के विषय में भी बहुत कुछ यही कहा जा सकता है। सूदन ने भाषा को तोड़ने और मरोड़ने में केशव और भूषण को भी मात दी है। सूदन का कोई भी शब्द किसी भी छन्द के अनुरूप रूप धारण कर लेता है; गाजीउद्दीनखाँ उसका एक उदाहरण है। इस नाम को सूदन ने कम से कम चार प्रकार से तोड़ा है। सूदन के इस काम से कुछ शब्द तो इतने दबे हैं कि पहचानने में भी नहीं आते। सुजान-चरित्र की भाषा में एक यही कमी नहीं है कि वह **जु** और **सु** के अत्यधिक प्रयोग से और भी अधिक शिथिल कर दी गई है। सूदन के इस जु और सु की अव्यर्थ और सर्वत्र गति है। वे **'काम जु बख्श'** की भाँति व्यक्तियों के नाम में भी बीच बिचाव करते देखे जाते हैं। इतने पर भाषा का पंचामृत तैयार किया गया है। उनकी भाषा में ब्रज, पंजाबी, अरबी, फारसी और कुछ मारवाड़ी के शब्द खूब मिले हैं। यह पंचामृत कवि की भाषा बहुज्ञता का प्रमाण है किन्तु पाठक की रुचि वल्लरी को नष्ट करने के लिए मट्ठा का कार्य करता है। दाँतों के नीचे कंकड़ों की भाँति कड़-कड़ाती हुई भाषा में ही वीर रस का परिपाक उत्तम माना जाता है अतः सूदन ने पंचामृत बनाना अच्छा समझा और **सोता था** के स्थान में **'सुत्ता था** लिखा; दूसरे युद्ध में चलाये जाने वाले हथियारों की ध्वनि का चित्रण करने के लिए सर ररंर, झर झझझर झर झझझर आदि अनेक निरर्थक चरणों का प्रयोग है। इन निरर्थक प्रयोगों से कवि का कोई विशेष अर्थ नहीं वह केवल रणक्षेत्र के शब्द चित्रण में ध्वनि का रंग भी भरना चाहता है। इतने पर भी रणक्षेत्र के चित्रण में कवि अपनी इच्छा के अनुसार सफल हुआ है।

भाषा के बाद बाह्य सौन्दर्य में छन्द का स्थान है। सूदन आधु-निक कलाकारों की भाँति छन्द को व्यर्थ नहीं मानता। केशव की राम-

चन्द्रिका की भाँति सुजान-चरित्र भी छन्दों का अजायबघर है जिसमें नवीन नवीन छन्दों का नाम और परिचय मिलता है।

भाषा और छन्द के उपरान्त रस का स्थान है जो भाषा और छन्द का आश्रय ले कर सहृदय के हृदय तक पहुँचता है। सुजान-चरित्र में मुख्य वीर रस और रौद्र रस हैं।

इन दोनों रसों का परिपाक तो ग्रन्थ में सर्वत्र देख पड़ता है। कहना न होगा कि अन्य रसों का परिपाक भी इन दोनों रसों की परिपुष्टि के लिए ही हुआ है। सातों जंगों के वर्णन में इन रसों के उदाहरण रूप से उपस्थित किये जाने वाले पद्य कहीं भी देखे जा सकते हैं।

छप्पय छुट्टन लगे उद्दण्ड चण्ड कोदंड भुसंडी।
जवरजंग घनघोर मारु गोलनु की मंडी॥
आसपास व्रजवीर भीर बहु मीरनु पारतु।
निकसि सकै नहिं कोइ रैनि दिन जुद्ध विचारतु॥
इह भाँति कछुक वासर गए तब चकसी रोसहिं भर्‌यौ।
सरदार मद्धि दरबार जे तिनहिं आपु आइसु कर्‌यौ॥

इस छन्द में वीर रस का सुन्दर परिपाक है। ऐसे ही रौद्र के उदाहरण भी मिल जायँगे। यदि द्वितीय आवृत्ति का अवसर आया तो हम इनके उदाहरणों का समावेश भी कर देंगे।

करुणा रस तो रौद्र और वीर रस का परिणाम है। जब वीर की वीरता का प्रकाशन किया जाता है तो एक ओर तो उसका वीर रस का प्रकाश होता है और दूसरी ओर करुणा का। जब रामचन्द्र के पराक्रम का विकास बन्दरों में वीर रस का सञ्चार करता है तो उसी का परिणाम रावण गृह में करुणा के रूप में आविष्कृत होता देखा

बाप विष चाखै भैया खटमुख राखै देखि,
आसन में राखै बसवास जाकौ अचलै।
भूतनु के छैया आस पास के रखैया,
और काली के नथैया हू के ध्यानहूँ ते न चलै॥
बैल बाघ बाहन बसन को गयंद खाल,
भाँग कौं धतूरे कौं पसार देतु अचलै।
घर को हवाल यहै शङ्कर की बाल कहैं,
लाज रहै कैसें पूत मोदक कौं मचलै॥

इस पद्य में पूर्ण हास्य रस है। ऐसे पद्य हिन्दी साहित्य में अधिक संख्या में न मिलेंगे।

छठवीं जंग के द्वितीय अंक के अन्तिम छन्द भयानक रस के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इनमें से दो एक छन्द तो तुलसीकृत कवितावली के सुन्दरकाण्ड के छन्दों के समक्ष सफलता के साथ तौले जा सकते हैं। तुलसी का नाम लेने से यह तात्पर्य है कि वे पद्य आलोचकों द्वारा अत्यन्त प्रशंसित हुए हैं। इसी प्रकार वीभत्स रस के उदाहरण भी अत्यन्त अच्छे बन पड़े हैं। कहीं २ तो वीभत्स ने वीर रस की बड़ी अच्छी सेवा की है।

रसों के वर्णन में कवि की सामर्थ्य का जहाँ तहाँ परिचय मिलता ही है। रही अलंकारों की बात सो कवि ने प्रसंग से आये हुए रूपक और उत्प्रेक्षादि अलंकारों को पूर्ण रूपेण निबाहा है। समस्त देशवर्ती रूपकों के उदाहरण के रूप में—**चन्द्रभाल विष भू कराल सुरभोग मदहंसि······रतनजुत सागर सम सूरज लसिय** वाला छप्पय; **गेंदा से गलफ गुल मेंहदी अतिभार·······पर भूमि फूली फुलवारी मानों कालकी और श्रोनित, अरघ ढारि लुत्थि जुत्थि पावडे दे···········भली विधि पूजा कै प्रसन्न कीनी कालिका** वाले कवित्त जो इस संग्रह में भी संग्रहीत हैं—दिये जा सकते हैं।

रूपक ही नहीं अन्य अलंकार भी जहाँ तहाँ पाठकों को मिल ही जायँगे। किन्तु पाठकों को इस बात का स्मरण रखना चाहिए कि सूदन का केशव की भाँति अलंकारों की छटा दिखलाना भर ही उद्देश्य नहीं था उनके सामने तो कथा वस्तु ही इतनी पड़ी थी जिसका गिनाना ही कठिन और उसमें कमी करते तो इतिहास के साथ अन्याय करने के दोष से दोषी बनते। सच है कवि कर्म अत्यन्त कठिन है।

सूदन का सुजान-चरित्र ब्रजभाषा का एक रत्न है जिसमें एक नृपति का चरित्र चित्रित है। इतिहास के प्रेमियों को इस ग्रन्थ में औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् मुगल राज्य की जैसी अवस्था हो गई थी उसका पूर्ण वर्णन एक ऐसे कवि की प्रतिभा सम्पन्न लेखनी द्वारा लिखा हुआ मिलेगा जिसने उस अवस्था में एक पात्र का अभिनय किया था। इतिहास की बहुत सी सूक्ष्म बातें भी कवि से नहीं छूटने पाई हैं। जिस समय सुजानसिंह वजीर के साथ फर्रुखाबाद के पठान अहमदशाह को दण्ड देने जाता है तो कवि सेना के मार्ग के गावों के नाम ले लेकर जहाँ जहाँ वह रुकी थी—वर्णन करता है।

अन्त में हम यही कह सकते हैं कि सुजान-चरित्र ब्रजभाषा का एक अमूल्य रत्न है जिसका महत्व काव्य की दृष्टि से जितना है उसका उससे भी अधिक महत्व ऐतिहासिक दृष्टि से है।

सुजानसिंह का चरित्र

मनुष्य मनुष्य की प्रशंसा बहुत कम करता है। यदि वह कभी मनुष्य की प्रशंसा करने में प्रवृत्त भी होता है तो केवल मनुष्य के दैवी गुणों से प्रेरित हो कर। मनीषियों ने इन गुणों के नाम अवस्था और काल भेद से अनेक रक्खे हैं। मनुष्य स्वभावतः अन्य पार्थिव के सुख दुख से सुखी और दुखी होता है; इसी भावना से प्रेरित होकर यदि वह किसी दुखी की धन से सहायता करता है तो उसे हम उदारता का नाम दे डालते हैं; किसी आततायी के विरुद्ध प्रयुक्त शक्ति को वीरता और पराक्रम का नाम दिया जाता है। दुःखी के दुःख से आर्द्रचित्त हो कर उसको सान्त्वना और धैर्य देने को सौजन्य और दया के नाम से पुकारते हैं। तात्पर्य यह है कि एक भावना के ही अनेक रूपों का नाम अनेक गुणों की संख्या है। हाँ ! तो मनुष्य अपने वर्गीय की इस भावना के रूपों का अवलोकन कर ही उसकी ओर आकृष्ट होता है। कवि भी अपने आश्रयदाता की ओर इसीलिए आकृष्ट होता है और उसके गुणों के वर्णन में अतिशयोक्ति आदि अलंकारों का प्रयोग अपनी प्रतिभा से करता है।

सूदन का आश्रयदाता सुजानसिंह भी उपर्युक्त गुणों से भूषित है। उसके ये गुण इतिहास में प्रसिद्ध हैं। किन्तु सूदन उसके पराक्रम, शौर्य आदि गुणों से ही अधिक प्रभावित हुए हैं। सूदन ने अपने काव्य-सुजान-चरित्र में इन्हीं गुणों का विशेष वर्णन किया है। यदि यह कहा जाय कि कवि ने नायक के केवल इन्हीं गुणों का वर्णन किया है तो अनुचित न होगा। मेरे इस कथन से यह भी तात्पर्य नहीं है कि उन्होंने आश्रयदाता में सौजन्य, उदारता और दया आदि गुणों को आने ही

नहीं दिया सो भी बात नहीं है। जहाँ तहाँ उनके इन गुणों का भी आभास मिलता है किन्तु पराक्रम शौर्य और वीरत्व की छाया में ही।

सुजान उर्फ सूरजमल के पूर्वज भरतपुर में राज्य करते थे और भारतवर्ष की प्रसिद्ध जातियों में परिगणित होनेवाली जाट जाति के नेता थे। इस जाति के लोग पंजाब, सिंध, राजपूताने और संयुक्त प्रान्त के कुछ भागों में बसे हुए हैं। इस जाति के आचार विचार राजपूतों से अधिकतर मिलते हैं। इनकी उत्पत्ति के विषय में अनेक प्रकार की किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। किन्तु ग्रन्थ प्रणेता उनको यदुवंशी स्वीकार करते हैं। राजपूतों की भाँति यह जाति भी युद्धप्रिय है। इधर ब्रज के जाटों को मैंने स्वयं देखा है कि वे शरीर के बहुत मजबूत होते हैं और लड़ने में अपनी शान समझते हैं। आजकल ब्रज के जाटों की युद्धप्रियता दंगलों में लंगोट बाँधकर लड़ने के रूप में प्रकट हो रही है। उनका यह सिद्धान्त कि **"कै खाइ मर्द या खाइ बर्द"** अर्थात् या तो मर्द ही पौष्टिक पदार्थों का भोग करे अथवा बैल ही खुराक खावे क्योंकि ये दोनों ही शारीरिक शक्ति का पूर्ण उपयोग करते हैं—इस बात को प्रकट करता है कि जाट युद्ध के उपयुक्त अपना शरीर भी बनाना जानते हैं। इधर आगरा प्रान्त के अन्तर्गत और उसके आसपास बोलचाल की भाषा में किसी के लम्बे चौड़े शरीर को देखकर जाट का सा शरीर कहने की रीति जाटों के लिए **'फौद्दार'** फौजदार शब्द का प्रयोग किया जाता है जो आजकल जाति के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इससे यह साफ़ प्रकट होता है कि पहले जाट अधिकतर सेना में नौकरी करते थे और सेना में उनको सेनापति तक के पद दिये जाते थे। इतिहास में पहले पहल शाहजहाँ के समय में इस जाति का वर्णन मिलता है जब कि गोकुल नाम के एक जाट नेता को जिसने मथुरा के आसपास लूटमार मचा रक्खी थी और जिसने सादाबाद (मथुरा से

पूर्व ३८ मील के फासले पर स्थित एक कस्बा) को नष्ट भ्रष्ट कर दिया था—दण्ड देने को अपना सेनापति भेजा था।

सूरजमल के सबसे प्रथम पूर्वज का नाम जिससे ग्रन्थकार सूदन जी ने इस वंश का प्रारम्भ माना है भूरेसिंह था। इन भूरेसिंह भूप से आठवीं पीढ़ी पर भावसिंह उदित हुए। यह मौजा सिनसिन में निवास करते थे। यही भावसिंह इतिहास में भज्जा के नाम से प्रसिद्ध हैं और इन्होंने ही औरंगजेब के दक्षिण चले जाने पर मथुरा के आस पास लूटमार प्रारम्भ कर दी थी। भावसिंह के तीन पुत्र हुए किन्तु सूदन ने केवल एक पुत्र का नामोल्लख किया है। उनका नाम नरेन्द्र बदनसिंह है जिसको कवि सर्वत्र बदनेश कहकर सम्बोधित करता है। यही बदनसिंह हमारे चरित्र नायक, जाट-कुल-भूषण सूरजमल के पूज्य पिता हैं। सूरजमल के प्रताप-सिंह नाम का एक सहोदर भाई और था जो बाजीराव के साथ युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हो गया था। सूदन ने इन्हीं सूरजमल का सुजान-चरित्र में चित्र अङ्कित किया है।

जाट पहले तो सेना में नौकरी करते रहे किन्तु औरङ्गजेब के पश्चात राज्य सत्ता के सूत्रों के शिथिल होते ही इन्होंने अपनी वैभव-वृद्धि की भरसक चेष्टा की और उस ध्येय की सिद्धि इस समुदाय के नेताओं को लूटमार ही में दिखाई पड़ी अतः कुछ काल तक खूब लूटमार की गई। आगरे के ताजमहल और सिकन्दरे की इमारतों के सम्बन्ध से इनकी यह लूट इतिहास में और भी अधिक प्रसिद्ध हो गई है; क्योंकि ऐसा प्रसिद्ध है कि सिकन्दरे के मकबरे से अकबर की हड्डियाँ खुदवा कर अलग फिकवा दी गईं और ताजमहल के दरवाजे आदि तोड़ डाले गये। इस लूटमार के रोकने का प्रयत्न दिल्ली के कठपुतली बादशाहों द्वारा भरसक किया गया और किसी अंश तक उन्हें अपने इस कार्य में सफलता भी मिली किन्तु जाटों की वाञ्छित वस्तु परि गणना और वैभवादि उन्हें भी किसी अंश में प्राप्त हो ही गये। जब दिल्ली के

राज सिंहासन के लिए आये दिन राजघराने में युद्ध होने लगे तो जाट नेताओं को पराजित व्यक्ति की सेना को लूट कर उनके सामान से उन्हें हलका कर देने के सुअवसर अधिक हाथ आने लगे। अन्ततोगत्वा सूरजमल तक आते आते उनकी परिगणना भरतपुर के जाट राजाओं के नाम से होने लगी जिनकी ओर दिल्ली के सम्राट् भी सहायता की अपेक्षा से देखने लगे।

जयपुर के राजा जयसिंह ने बदनसिंह को जाटों का राज्य दिलवाने में सहायता की थी जिसका उल्लेख कवि ने एक सोरठे में ईश्वरसिंह के मुख से कराया है। महाराज बदनसिंहजी ने ही भरतपुर का इतिहास-प्रसिद्ध किला निर्माण कराया था। जनरल लेक की सेना और उसकी बहुमुखी राजनैतिक चालें भी दुर्ग पर विजय पाने में असमर्थ रहीं थीं। महाराज बदनसिंह बहुत दिन तक राज्य का कार्य सँभालते रहे किन्तु जब उनकी दृष्टि कम हो गई तो उन्होंने राज्य भार अपने योग्य और पितृ-भक्त पुत्र सूरजमल को सौंप दिया और आपने एकान्तवास करते हुए सं० १८१२ में परलोक गमन किया। पिता के मरने के समय तक ही सूरजमल ने वे प्रसिद्ध सात युद्ध लड़े जिनका वर्णन सूदन ने सुजान-चरित्र नामक ग्रन्थ में किया है जिनका सारांश कथा रूप में अन्यत्र दिया गया है।

सूरजमल के चरित्र में वीरोचित पराक्रम, युद्ध-प्रियता और उत्साह आदि गुण अधिक मात्रा में उपस्थित हैं जिनका वर्णन भी कवि ने असा-धारण रूप से किया है। इन्हीं गुणों के फल स्वरूप ही यौवन काल ही में मेवात, और मालवा को जीत कर सूरजमल ने पिता के हृदय में अधिकार पाया था और उसके पश्चात् सवाई जयसिंह द्वारा किये गये उपकारों का बदला उसके पुत्र ईश्वरसिंह की रक्षा करके चुकाया था। पुनः दिल्ली में जा कर अकबरशाह को बादशाह बनाया

था। कवि सूदन ने घनाक्षरी के एक चरण ही में सूरजमल के प्रचंड पराक्रम का वर्णन कर दिया है :—

दिल्ली दल दट्टन सुकट्टन मलेच्छ वंस,
देस देस जाहर प्रचंड तेग सूजा की।

दिल्ली के नाम लेने से कवि का तात्पर्य यह है कि जो दिल्ली चक्रवर्ती राज्य की राज्य-लक्ष्मी का अधिष्ठान है उसी दिल्ली के दलों को सूरजमल की प्रचंड तलवार काट कर नष्ट भ्रष्ट कर देती है। सुजानसिंह को यदि कहीं से रण निमंत्रण मिल जाता है तो उनको अपार हर्ष होता है क्योंकि **'सब भाँति चैन दिन रैन सुख, पै न परति कल बिना रन'** उनको राजसी सुख अच्छा नहीं लगता है; सुन्दर सरोवरों में जल विहार से तो कहीं अधिक रण विहार उनको सुखकर है। माधौसिंह जयपुर पर आक्रमण कर देता है तो ईश्वरसिंह बदनसिंह के पास सहायता माँगने के लिए पत्र भेजते हैं। उधर पत्र के पहुँचते ही सूरजमल पिता के मुख से **'थाँभि ढुँढ़ाहर देस'** का आदेश सुनकर अत्यन्त प्रसन्न होते हैं।

'यह सुनि कै सूजा पितु पग पूजा हरषानी सब देह।' से कवि ने नायक की युद्ध प्रियता का परिचय दिया है। सूरजमल के पराक्रम के आतंक का वर्णन एक छप्पय छन्द में कवि ने किया है जिसको हम नीचे उद्धृत करते हैं :—

'पूरब पच्छिय पुकार भूमि दिगपालन छंडिय।
पच्छिम तच्छिन गच्छि जमन ग्रह खलमल मंडिय॥
उत्तर सकल उदास त्रास तें ग्रास न भावै।
दच्छिन पर्‌यौ भगान कहत सूरज कहुँ आवै॥
आतंक मांभि दब्बे दुवन देव दिगीसनु सुख बढ़्यौ।
व्रज चक्रवर्ति बदनेस-सुत श्री सुजान जब्बहिं चढ़्यौ॥

इस छन्द से कवि ने यह कह दिया है कि सूरजमल के आतंक से दिक्पालों और चारों दिशाओं में खलभली मँच जाती है; चारों ओर भगदड़ फैल जाती है; और शत्रु सूरज के आतंक से चुप हो जाते हैं। नायक के पराक्रम, वीरता और उत्साह आदि गुणों का समर्थन करने वाले पद्य ग्रन्थ से अनेकों उद्धृत किये जा सकते हैं। पूरा ग्रन्थ ही वीर रस पूर्ण है और वीर रस भी सूरजमल की शक्ति से ही परिपक्व होने वाला वीर रस है। ग्रन्थ में वर्णित युद्धों में विजय लाभ करना, दिल्ली और दक्खिनी दलों को परास्त करना—जो कि तत्कालीन सुसंगठित दल थे—तो एक ऐतिहासिक सत्य है अतः कवि अत्युक्ति के दोष से सदा मुक्त है।

दूसरा गुण जो सूरजमल के चरित्र हार में उज्वल मुक्तावत् प्रकाशित है वह उनका पितृ-प्रेम है। यह एक ऐसा गुण है कि जो सर्व साधारण के हृदय को मुग्ध करने में समर्थ है। सूरजमल तो बिना पिता की आज्ञा के कोई काम करना जानते ही नहीं। वे छोटी से छोटी बातों में भी पिता की आज्ञा की प्रतीक्षा करते हैं और युवराज होते हुए भी कभी भी निरंकुशता का परिचय नहीं देते। राजाओं में और विशेष कर युव-राजों के लिये तो यह एक गुण ही सम्पूर्ण गुणों का उद्भव स्थान है। प्रजा तो सर्वदा राजा के चरित्र का ही अनुकरण करती है। राजमार्ग ही प्रजा के लिए आदर्श मार्ग हुआ करता है इतिहास इस बात का साक्षी है। उनके इस गुण के समर्थन के लिए कुछ पद्य यहाँ दिये जाते हैं :—

अनुगतिः—हैं वदनसिंह महेन्द्र महि पर धरम धुरंधर धीर।
ताकौ कुँवार सुजानसिंह सुकरै पर-उर पीर॥
जिन जोति वसुधा नीति सों कहुँ भीति राखी नाहिं।
इक प्रीति श्रीहरदेव को कै पिता के पद माहिं॥

सत्य है आज्ञाकारी पुत्र के लिए पिता और परमात्मा में कोई भेद नहीं है।

कूर्म नृपति ईश्वरसिंह की सहायता कर और दक्खिनी दल का दलन कर सूरजमल जिस उत्कण्ठा से भरतपुर को लौटते हैं वह उनके पितृ-प्रेम को पूर्णतया प्रकट करती है।

सो०—फिर आए निजु गेह सहित नेह सब देह सों
जैसें आवतु मेंह बहुत काल सूखा भएँ॥
दो०—पग भेटे वदनेस के सूरज मन वच काइ।
तब उठाइ सिर सूँघि कैं लीन्हों कण्ठ लगाइ॥
तब सूरज कर जोरिके कहे जुद्ध विरतंत।
महाराज परिताप तें करि आए अरि अंत॥
लिखि भेज्यो मनसूर ने दीन वचन महाराज॥
सुनि ब्रजेस आज्ञा दई करनी याकों संग॥
आयसु लै वदनेस को सुभ दिन कियो पयान॥
(तृतीय जंग)

और भी—

दो०···रुते अली कों कोल सें तब ही दियो पठाय।
आप आइ निज गढ़न में देखे पितु के पाय॥
सदन सदन आनंद भये वदन वदन के फूल।
सुत सुजान के विरद गुन सुनत श्रवण सुखमूल॥

आज्ञाकारी पुत्र के गुणों पर कौनसा पिता प्रसन्न नहीं होता। सूरजमल की आज्ञाकारिता के कारण पिता पुत्र में दशरथ और राम का सा प्रेम दृष्टिगोचर होता है। सूरजमल में सचमुच राम की सी ही पितृ-भक्ति है।

तीसरा गुण जो सूरजमल में अन्य गुणों से कम देदीप्यमान नहीं

है वह उनकी शरणागतवत्सलता है। जो व्यक्ति भी—चाहे किसी समय वह भरतपुर का शत्रु ही क्यों न रहा हो—महाराज की शरण आया उसी को अभयदान मिला। इस अभयदान के कारण ही सूरज को सातो युद्ध लड़ने पड़े थे। उनमें से एक युद्ध में भी अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए रक्त नहीं बहाया गया है। जब जिसने आर्त बनकर पुकारा कि महाराज के हृदय से दया-पयस्विनी उमड़ पड़ी और शरणागत को अभय दे डाला। कोई यह न समझें कि उनको अपने पराक्रम और पौरुष का गर्व था इसीलिए वह सबसे उलझते और लड़ते फिरे; किन्तु बात तो इसके बिलकुल विपरीत है। वे प्रथम तो अत्याचारी को समझाते हैं यदि समझाने पर नहीं मानता तो फिर दण्ड शिक्षा देने के लिए अपना सब कुछ दाँव पर लगा देते हैं।

थासहरे के राव के छल से क्रुद्ध हो कर सूरज के ये वचन विचार करने योग्य हैं।

दो०—वदी करै तासों वदी करत दोसु नहिं होइ।
अब याकौ हौं मारिहौं होनी होइ सु होइ॥

'**अब याकौ हौं मारिहौं** में गर्व नहीं किन्तु वीरोचित स्वाभिमान प्रकट हो रहा है। महाराज ने कभी भी शरणागत की रक्षा से स्वयं लाभ नहीं उठाया है यह उनका स्वार्थत्याग ही है। इस शरणागत वत्सलता के साथ साथ रण कौशल, नीति निपुणता और गुण-ग्राहकता आदि गुण भी चिपटे हुए हैं जिसके उदाहरण चरित्र ग्रन्थ में यत्र तत्र मिल सकते हैं।

सूरजमल का चरित्र एक आदर्श चरित्र है। हिन्दुओं के बुझते हुए वैभव की अन्तिम छटा उनमें दीख पड़ती हैं। एक महाकाव्य के चरित-नायक होने के सम्पूर्ण गुण उनमें विद्यमान हैं। वे जाति के प्राण और देश के सर्वस्व हैं।

कथा का सार

जिस यादव-कुल में दैत्य-कुल-विध्वंसक, द्रौपदी-दीना-नाथ, देवकी-नन्दन, दशावतार शिरोमणि तथा यशोदानन्द के आनन्द स्वयं श्रीकृष्णजी ने जन्म लिया था उसी कुल में कालान्तर में भूरेसिंह का जन्म हुआ। इनसे आठवी पीढ़ी में जा कर भरतपुर के इतिहास प्रसिद्ध-दुर्ग के निर्माणकर्त्ता महाराज बदनसिंहजी उदय हुए। संवत् १८१२ में एकान्तवास की अवस्था में आपका स्वर्गवास हो गया। महाराज बदनसिंहजी को सुयोग्य सुजानसिंह पुत्र रूप में प्राप्त हुए। श्रीसुजानसिंह (सूरजमल) ने अपने पिता के जीवनकाल में सात युद्ध किये जिनका क्रमशः वर्णन कवि ने इस ग्रन्थ में किया है। इन सातों जंगों का कथा-सार नीचे दिया जाता है।

(प्रथम जंग)

सं० १८०२ में अगहन मास में सूरजमल यमुना तट पर आखेट करने गए थे। वहीं साबितखाँ के पुत्र फतेहअलीखाँ ने असदखाँ के विरुद्ध सहायता माँगने के लिए अपना दूत भेजा; किन्तु सूरजमल ने उसको स्वयं आ कर मिलने के लिए कहला भेजा। जब उसने स्वयं आर्त बन कर सहायता माँगी तो सूरजमल उसकी सहायता करने के लिए कोल होते हुए ससैन्य चण्डौस आए। अन्त में दोनों सेनाओं में घोर युद्ध हुआ जिसमें असदखाँ गोली लगने से मारा गया और उसकी सेना परास्त हो कर भाग गई। शरणागत फतेहअलीखाँ को कोल भेज कर स्वयं भरतपुर लौट आए।

(द्वितीय जंग)

सवाई राजा जयसिंह के पुत्र ईश्वर सिंह के राज्य पर उनके छोटे भाई माधोसिंहजी द्वारा उभाड़े जाने पर मराठों ने चढ़ाई कर दी। ईश्वरसिंह ने बदनसिंहजी के पास सहायता माँगने के लिए पत्र भेजा।

पिता की आज्ञा पा कर सूरजमल संवत् १८०४ के श्रावण महीने में अपनी चुनी हुई सेना लेकर कुंभेर से रवाना हो कर जयपुर पहुँचे। ईश्वरसिंह ने आपका बड़ा स्वागत किया। यहाँ से दोनों सेनाओं ने मिलकर मराठों को मोती डूँगरी के युद्ध में परास्त किया और वगरू महल की ओर भगा दिया। ये सेनाएँ फिर वहाँ भी पहुँच गईं और अचानक मराठों की सेना पर धावा कर दिया गया। इस युद्ध के साथ साथ कई और युद्धों में परास्त हो कर मल्हारराव ने संधि का प्रस्ताव किया। माधोसिंह को दो परगने दिलवा कर मराठे अपने देश को लौट गए और सूरजमल बड़ी उत्कण्ठापूर्वक पिता के पास भरतपुर वापिस आ गये।

(तृतीय जंग)

संवत् १८०५ के पूस मास के शुक्ल पक्ष में सूरजमल को समाचार मिला कि सलावतखाँ बख्शी ने भारी सेना के साथ उसके देश पर आक्रमण करने के इरादे से दिल्ली से प्रस्थान कर दिया है तो यह भी अपनी सेना सुसज्जित कर के उसकी अगवानी करने के निमित्त आगे बढ़े और मेवात के नौगाँव में डेरा डाला। यहाँ से अपनी चुनी हुई छः सहस्र सवार सेना साथ ले कर पंद्रह कोस आगे बढ़े और वहाँ ठहर कर अपनी सेना को पाँच टुकड़ियों में विभाजित किया। उसके बाद अपने विश्वासपात्र सरदारों की अधीनता में बख्शी की सेना के चारों ओर चौकियाँ स्थापित कर दीं जिससे बख्शी की सेना को एक मजबूत दुर्ग के भीतर बन्द कर दिया। युद्ध में सलावतखाँ परास्त हुआ और उसके दो प्रसिद्ध सरदार रुस्तमखाँ और हकीमखाँ इस युद्ध में काम आए। तब सब ओर से निराश हो कर सलावतखाँ ने संधि का प्रस्ताव किया जिसको सूरज ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। दोनों में जब सन्धि हो गई तो सूरजमल अपने पुत्र जवाहरसिंह के साथ जो इस युद्ध में साथ था घर वापिस लौट आए और उसका विवाह मथुरा से किया।

(चतुर्थ जंग)

संवत् १८०६ में भाद्रपद मास में सूरजमल ने वजीर सफ़दरजंग की सहायता कर पठानों का दर्प चूर्ण किया। (बादशाह के कथनानुसार सफ़दरजंग ने अफ़गानों के कुल राज पर अधिकार कर लिया और इसके प्रबन्ध का भार राजा नवलराय को दे दिया। अहमदखाँ ने नवलराय को युद्ध में परास्त किया और वे उस युद्ध में मारे गये)। जब नवलराय की मृत्यु का समाचार दिल्ली पहुँचा तो सफ़दरजंग ने क्रुद्ध हो कर अहमदशाह से अहमदखाँ पर आक्रमण करने की अनुमति मांगी। आज्ञा मिलने पर उन पर आक्रमण कर दिया गया और दयानाथ राजदूत को सूरजमल के पास सहायतार्थ बुलाने के लिये भेजा। सुजानसिंह ससैन्य कोल पहुँचे जहाँ वजीर पहिले डेरा डाले पड़ा था। मनसूर वजीर ने इसमाइलखाँ को सूरजमल से मिलने को भेजा और दरबार आम में सूरज का स्वागत किया। दूसरे दिन वजीर भी महाराज के डेरे पर उपस्थित हुआ और मन्त्रणा करके यह निश्चित किया कि सुजानसिंह भरतपुर से थोड़ी सी सेना और बुलावे। मन्त्रणा के अनुसार सुजानसिंह जी ने अपने पिता को सेना भेजने के लिए पत्र लिख दिया। किन्तु सेना आने से पूर्व ही दोनों सेनायें कूँच कर कासगंज पहुँच गई और कुछ दिन वहाँ विश्राम करके नौलखा पर अधिकार कर लिया और वहां पर डेरा डाल दिया। उधर दोनों सेनायें नौलखा में डटी हुई थी और मनसूर ने व्यूह रचना कर डाली। उधर अहमदखाँ पठान ने पठानों की सेना एकत्र कर और दस सहस्र रुहेलों की सहायक सेना ले कर पाँच कोस के फासले पर गंगा की कछार में अपना मोरचा जमाया। अहमदखाँ ने भेदनीति का आश्रय ले कर सूरज को अपनी ओर मिलाने की चेष्टा की किन्तु असफल रहा। उधर सूरज ने मनसूर से युद्ध के लिये सन्नद्ध होने को कहा। युद्ध आरम्भ हुआ। रुस्तमखाँ पठान और सूरज से कठिन लड़ाई हुई जिसमें रुस्तमखाँ वीरगति को

प्राप्त हुआ; किन्तु मनसूर ईसाखाँ पठान से परास्त हो कर दिल्ली को भाग गया। इसके बाद सुजानसिंह भी अपनी आने वाली सेना से गेंडू में मिल कर स्वदेश वापिस लौट आये।

नवाब सफदर जंग ने दिल्ली पहुँच कर मल्हारराव होलकर को सहायतार्थ बुलाया। मल्हारराव पचास हजार सवार साथ ले कर आ पहुँचे। नवाब ने सुजानसिंह और मल्हाराव की सहायता ले कर अहमद खाँ पर फिर आक्रमण किया। पठानों ने परास्त हो कर मल्हारराव को बीच में करके सन्धि कर ली। इस सन्धि के अनुसार मल्हारराव, मनसूर और पठानों में भूमि के तीन बराबर भाग कर दिये; किन्तु सुजानसिंह निस्वार्थ भावना से शरणागत की रक्षा कर स्वदेश वापिस आ गये।

(पञ्चम जंग)

संवत् १८०६ में सुजानसिंह ने सफदर जंग के मंतव्यानुसार बादशाह की आज्ञा पाते ही घासहेर के राव बहादुर सिंह पर चढ़ाई कर दी। पुत्र जवाहर सिंह भी सेना ले कर अपने पिता सुजानसिंह से आ मिला। दोनों विरोधी दलों में युद्ध हुआ जिसमें राव परास्त हुआ, और दुर्ग के अन्दर चला गया। जब सरदारों ने राव पर सन्धि करने के लिए जोंर डाला तो उसने जालिमसिंह को सुजानसिंह के पास सन्धि समाचार ले कर भेजा। जालिमसिंह ने दस लाख रुपया और सम्पूर्ण तोप, रहकला ले कर युद्ध को बन्द कर देने की शर्त पर सुजानसिंह को राजी कर लिया। किन्तु राव ने जालिम सिंह की बात को जब स्वीकार नहीं किया तो उसने आत्महत्या कर प्राण दिये। सुजान सिंह ने अमर सिंह को इस सब का भेद लेने के लिए दुर्ग के अन्दर भेजा। राव ने छल कर के सम्पूर्ण सामान अपने पुत्र के पास दिल्ली भेज दिया। तब तो सुजानसिंह के क्रोध का वारापार न रहा और अपनी सेना को प्रातः-काल ही इशारा पाते आक्रमण कर देने की आज्ञा दी। राव पर सन्धि करने के लिए बहुत जोंर डाला गया किन्तु जब उसने न माना तो

वहुत से नागरिक सुजान सिंह की शरण में आ गये। राव अपने थोड़े से साथियों को साथ ले कर दुर्ग से वाहर निकला और युद्ध करते करते मारा गया। इस प्रकार घासहरे का दुर्ग जीत लिया गया।

(षष्ठ जंग)

संवत् १८१० के चैत्र मास में सुजान सिंह ने वजीर मनसूर के लिए दिल्ली पर आक्रमण किया। कवि ने चढ़ाई का वर्णन करने से पूर्व दिल्ली के इतिहास को शांतनु नृप से ले कर अहमदशाह तक के वादशाहों का नाम तथा राज्यकाल आदि के रूप में लिखा है। इसमें शांतनु से ले कर जनमेजय तक का वृत्तान्त चौहान वंशीय पृथ्वीराज और मुहम्मदगौरी के युद्धों का उल्लेख और पठानों के सौ वर्ष राज्य का उल्लेख करके तैमूरलंग से ले कर तत्कालीन राजा तक वर्णन है। अहमदशाह के वजीर सफदरजंग और वख्शी गाजीउद्दीनखाँ में मनोमालिन्य था। एक वार वख्शी गाजीउद्दीनखाँ ने सफदरजंग के विरुद्ध वादशाह के कान भर के उसको दिल्ली से निकलवा दिया। घासहरे का दुर्ग जीता जा चुका था। वजीर ने क्रुद्ध हो कर सुजानसिंह को दिल्ली बुला कर सम्पूर्ण हाल कहा। सुजानसिंह ने राज सिंहासन के विरुद्ध हथियार उठाने से इनकार किया और सेना की संख्या भी अपर्याप्त वताई। किन्तु मन्त्रणा के पश्चात् सुजानसिंह की सम्मति से औरंगजेव के वेटे कामवख्श के नाती को बुला कर अकवरशाह की पदवी सहित वादशाह वनाया। युद्ध हुआ और लड़ते-लड़ते सुजानसिंह ने लाल दर्वाजा तोड़ डाला। उसके वाद दिल्ली को वजीर और सुजानसिंह के सिपाहियों ने खूव लूटा। कवि ने इस लूट के वर्णन में पशु-पक्षी, शस्त्र, वर्तन, वाजा, आभूषण, कपड़ा, मिठाई आदि अनेक वस्तुओं के नाम का एक छन्दमय कोश वना डाला है।

इस लूट के वाद फिर युद्ध हुआ। यह युद्ध दिल्ली और यमुना के वीच कोटरा में हुआ था। इस युद्ध में राजेन्द्रगिरि नाम का एक नवाव

का सेनापति मारा गया। इस दुर्ग के तोपखाने से जन-हानि अधिक हुई अतः सुजानसिंह ने सेना हटा ली। नवाब ने उमरावगिरि और अनूपगिरि को सेनापति बनाया। लड़ाई बड़ी घमासान हुई किन्तु दुर्ग न टूट सका। सूरजमल और वजीर की सेनायें तिलपत्ति की ओर चल दीं और वहाँ पहुँच भी गईं। गाजीउद्दीन खाँ ने बादशाह की आज्ञा ले कर इनका पीछा किया किन्तु गढ़ी के युद्ध में सुजानसिंह द्वारा परास्त होकर दिल्ली वापिस आ गया।

कुछ दिन आराम कर वजीर और सुजानसिंह फिर दिल्ली पर चढ़े। दिल्ली की सेना लड़ने से लिए बाहर आई किन्तु हार कर भीतर घुस गई। सुजानसिंह ने सेना को बाहर निकालने के निमित्त अपनी सेना को कूच की आज्ञा दे दी। इस समाचार को सुन कर गाजीउद्दीन बीस हजार सवार और तोपखाना ले कर युद्ध के लिए चला; दिल्ली से आठ कोस के फासले पर युद्ध हुआ जिसमें गाजीउद्दीन परास्त हो कर फिर दिल्ली लौट गया। दिल्ली पहुँच कर जयपुर के राजा माधोसिंह और मराठों को सहायतार्थ बुला भेजा। सुजानसिंह ने फरीदाबाद में डेरा डाले पड़ी हुई बादशाही सेना पर धावा बोल दिया और उसे पूर्ण-तया परास्त कर भगा दिया। माधोसिंह ने दोनों दलों में सन्धि करा दी और सुजानसिंह के साथ स्वदेश लौट आए।

(सप्तम जंग)

गाजीउद्दीनखाँ ने सुजानसिंह को दण्ड देने का निश्चय किया क्योंकि उसने वजीर को उसके विरुद्ध सहायता दी थी। गाजीउद्दीनखाँ द्वारा भड़काए जाने पर मल्हारराव ने भरतपुर पर चढ़ाई कर दी। सुजानसिंह ने रूपराम को मराठों के पास उनका भेद लेने को भेजा था। मल्हारराव उस समय जयपुर में डटा हुआ था। मल्हारराव ने दो करोड़ रुपये माँगे। रूपराम ने उनकी सेना की संख्या और बल्लभगढ़ के दुर्गाध्यक्ष बल्लू चौधरी के धोखे से महमूद आकबत द्वारा मारे जाने

का समाचार सुजानसिंह के पास भेजा। सुजानसिंह ने अपने पुत्र जवाहरसिंह को सेना ले कर बरसाने भेजा। रूपराम ने दो करोड़ के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया और ब्रज की शोभा तथा कृष्ण-लीला का वर्णन मल्हारराव को सुनाया।

मल्हारराव का पुत्र खंडेराव मेवात को लूटता हुआ पहले से ही ब्रज में पहुँच चुका था। किन्तु मल्हारराव और सुजानसिंह दोनों ही ने अपने अपने पुत्रों को युद्ध न करने की आज्ञा भेज दी। दीघ के दुर्ग में सुजानसिंह ने जाटों की एक सभा की और उनकी अनुमति ले कर युद्ध की तैयारी कर दी। अपने दुर्गों को दृढ़ किया गया; गोला और बारूद तथा भोजन की सामग्री एकत्रित की गई। उधर मल्हारराव ने जयपुर से साठ सहस्र सेना सहित कूच कर दिया। दो दिन की यात्रा के पश्चात् पुरोहित रूपराम को फिर बुलाया और रूपराम को इसकी दसगुनी सेना कर देने का आतंक दिखाया। रूपराम ने श्रीकृष्ण द्वारा काल यवन के जिसके पास असंख्य सेना थी परास्त किये जाने की कथा कह सुनाई। इससे उसका यह तात्पर्य था कि आपकी असंख्य सेना ब्रजाधिप सुजानसिंह को परास्त नहीं कर सकती किन्तु आपकी काल यवन की सी अवस्था होगी। ग्रन्थ का वर्णन मुचकुन्द की नेत्र-ज्वाला से कालयवन के जल कर भस्म हो जाने पर समाप्त होता है।

ग्रन्थ का वर्णन अधूरा है। ज्ञात होता है कि कवि इस समय ग्रन्थ को अधूरा छोड़ कर दुनियाँ से चल बसे। इस युद्ध में सुजान और मराठों की सन्धि हो गई। संवत् १८२१ में सुजानसिंह युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। उनके बाद उनके बड़े पुत्र जवाहरसिंह भरतपुर की गद्दी पर बैठे।

लाज भरी द्रोपदी सुराज भरी ब्रजभूमि
कूबरी इलाज सो अवाज करी कोपिका।
देवकी अनन्द भरी ऊर्गें ब्रजचन्द धरी
भाग भरी जसुदा सुहाग भरी गोपिका ॥४॥

अनुगीत – तिहिं बंस में परसस लाइक नृपनु के अवतंस।
अरि कस लौं निरबस कीने तपत नभ ज्यों हंस ॥
जग उदित उद्धत जदुकुलनु में भयौ भूरे भूप।
ताकौ भयौ सुत रौरिया सो रौरि ही के रूप ॥
वह रौरिया अरि रौरिया रनबस में उद्योत।
परताप मेंटन भौ पचै परताप को सो गोत ॥
तिहिं पचै कै सुन्दर सचे ताकै मदू महिपाल।
मदु मर्दनौं महि के महीपनु साहि कौ उर साल ॥
ताकैं भये प्रथिराज सुत प्रथिराज के परवान।
पहिले प्रथीपति नाम दीनो पैज करि भगवान ॥
पुनि भयौ मकनि भुवाल भूपह भय विनासन जोग।
जिन कियौ ससिकुल प्रगट भू पर निखिल वसुधा भोग ॥
सुत भयौ तिनकैं खानचन्द असंद चन्द समान।
तिन अपनी किरवान सौं वसु कियौ सकल जहान ॥
ब्रजराज तिनके और तौ ब्रजराज के परताप।
जिनि साहि के दल गाहि कै निज साहिबी करि थाप ॥
पुनि भयौ भूपति भावसिंह भुजान वल भरपूर।
रवि वंस में ज्यों करनु त्यों ससिवंस कौ वह सूर ॥

ता भावसिंह भुवाल के वदनेस नाम नरेस।
नहिं वा समान धनेसहू नखतेस और दिनेस ॥
हैं वदनसिंह महेन्द्र महि पर धर्म धुरंधर धीर।
ताकौ कुँवार सुजानसिंह सुकरै पर-उर पीर ॥५॥

दो०—सवै वीर सव धीर अति, सवै सुधारन काज।
हैं व्रजेस के पूत वहु, पै सुजान सिरताज ॥६॥

कवि०—पाँच कुरएस के महेस के उभय भये,
तैसेही दिनेस के सुएक है नितेस के।
दोइ अलकेस के जदेस के प्रगट दोइ,
सूदन गनेस के यहै अँदेस सेस के ॥
काहू अमृतेस के कपेस के जलेसहू के,
राज काज पूरौ सूरौ सालतु दिगेस के।
भूमि के नरेस के सुरेस के भयौ न होइ,
जैसा भयौ सूरज व्रजेस वदनेस के ॥७॥

दो०—हुकुम मानि वदनेस कौ, सूरजमल्ल कुँवार।
प्रथम मारि मेवात कौं कियौ आप अधिकार ॥८॥
पुनि माढ़ौ गढ़ सालुवै, जीत्यो सिंह सुजान।
कूरम की रच्छा करी, निज कर गहि किरवान ॥९॥
पुनि कूरम सौं विरझियौ छोड़त देखि म्रजाद।
वचन जीत तासौं भयौ सूरज आपु जवाद ॥१०॥

हरगीत-भूपाल पालत्र भूमिपति वदनेस नंद सुजान हैं।
जानै दिली दल दक्खिनी कीने महा कलिकान हैं ॥

ताकौ चरित्र कछूक सूदन कह्यौ छंद बनाइ कै।
कहिदेव ध्यान कवीस नृप-कुल प्रथम अंक सुनाइकै ॥११

इति प्रथम अङ्क

दो०—ठारै सैरु दुहोतरा अगहन मास सुजान।
बैठि सजल नौहि कै किय आखेट-विधान ॥१॥

छप्पय—कालिन्दी तट दुग्ग उग्ग सरवर मन मोहत।
जलचर जलज अनेक तहाँ खग मृग बहु सोहत ॥
करतु सरस जलकेलि कभू मीनहिं गहि लावतु।
कबहूँ ह्वै असवार धाइ डढ्ढारु धुकावतु ॥
इहि भाँति रमत आखेट वदन-पूत मजबूत मन।
सब भाँति चैन दिन रैन सुख पै न परति कल बिना रन॥२

दो०—एक दिवस दरबार करि बैठ्यौ सिंह सुजान।
आस पास भूपतिनु के बैठे तनय अमान ॥३॥

रोला—ज्यौं पारस के वी बिना आरस, रवि दरसै।
उडुगन सहित मयंक सरद पूरन दुति सरसै ॥
ज्यों गयंद गन मद्धि महा जूथप मद बरसै।
सुरपति ज्यौं सुरसभा इती उपमा जा परसै ॥
पौरि खड़े प्रतिहार रजत आसा चमकावत।
राइरान, नृप, खान, तहाँ सनमानहिं पावत ॥
तिनकै बाजि दराज द्वार गजराज विराजत।
पाइक अरु पालकी सहस-सहसनुही छाजत ॥
तुरकी, ताजी, कुही, देस खंधारी वलकी।
अरबी गेराखी रु पर्वती कच्छी थलकी ॥

नौने मौने नैन कान सोहत लघु चंचल।
जिनके रूपहिं देखि रहत फरकत जनु अंचल॥
जिनकी चाल विलोकि चाल चुकि जात जु मनकी।
को कुरंग खगराइ तात्र नहिं पवन गवन की॥४॥

कवित्त—दंतन सौं दिग्गज दुरंतर दवाइ दीने,
दीपति दराजु चारु घंटन के नद हैं।
सुंडनि झपट्टि कैं उलट्टत उदग्गगिरि,
पट्टत सुसद्द वल किंमत विहद्द हैं॥
सूदन भनत सिंह सूरज तुम्हारे द्वार,
झूमत रहत सदा ऊँचे वहु कद हैं।
रद्द करि कज्जल जलद से समद रूप,
सोहत दुरद जे परद्दल दलद हैं॥५॥

छप्पय—यों गज वाजि अपार द्वार दरवार मद्धि नर।
ज्यौं जयन्त सुरकत-तनय अरि अंत करन वर॥
तिहीं वार इक मीर आइकैं खवर कराइय।
सावितखाँ-सुत मोहिं कुंवर के पास पठाइय॥
तव करि सलाम प्रतिहार ने दूत वचन जाहर कर्‌यौ।
जहँ नर सुजान मरदान मुख भट समूह उदभट भर्‌यौ

सो०—तव तो वकील कर जोरि, अरज करी कछु अरज की।
तव सुजान दृग मोरि, मसलति की सारति करी॥७॥

हरगीतिका—यह सुनि सँदेस सुजान वुल्लिय मनहुँ फुल्लिय कंज है
हमसों नवावु न साँचु राखत करत खातर रंज है॥

तुम जाइ कहहु नवाब सों जौ साँचु राखत जीय में
तौ एक बार मिलै हमैं नहि बात कहनी बीय में ॥८

दो०—ऐसे वचन सुजान के सुनि वकील सुखकान
फिर बौल्यौ हित स्वामि कौं करत बहुत सनमान ॥९

भुजंगो—महाराज बदनेस भौ भाग पूरौ ।
भयौ तासु के पूत पनपाल रूरौ ॥
रहै भूप सोई तिहारौ कहावै ।
सबै सुक्ख पावै सरन ताकि आवै ॥
बसै बाँह की छाँह मैं छत्रधारी ।
हिये साहि के साहि के संग पारी ॥
सबै राइरानैतु अवलंबु लीनौ ।
कियौ खान सुलतान कौ मान हीनो ॥
जिसै पाल लीने महीपाल औरौ ।
तिसै आपनौ नाम की ओर दौरौ ॥
करौ आपनो ही फतेहू अली कौ ।
नहीं ढील कीजै बनै ज्यौं भली कौ ॥१०॥

दो०—रुखसत पाइ सुजान तें सो वकील सिरनाइ ।
आयौ जहाँ फतेअली कही सुकही बनाइ ॥११॥
साइत साधि सवार ह्वै करि सलाह सजि सैन ।
सूरज हू आखेट मिस ईखू लयौ ससैन ॥१२॥
फतेअली आयौ उतै संग पाँच सै ज्वान ।

पवंगा—फिरि वदनेस कुँवार बियौसु फते अली।
बैठे इकले जाइ करन मसलति भली॥
घरी दोइ वतराइ दुहूँ के मन रले।
कौल वचन करि एक दोऊ डेरा चले॥ १४॥

इति द्वितीय अङ्क

दुपई—असदखान खानजादौ हू ऐसे सुनि कै आयौ।
फतेअली रु कुँवर साहिव को व्यौरौ वेगि पठायौ॥१॥
सुनतु तुरत महाराज कुँअर ने वकसी आपु वुलायौ।
तुम चंडौस जाहु नकदी लै मोको जानो आयौ॥२॥
हुकुम पाइकै श्रीसुजान कौ दलपति निज सिर नायौ।
वोलि नकीव कही सरदारन तुरतै कूँच करायौ॥३॥
भले भले सरदार सूर मिलि तनक न देर लगायौ।
चार्‌यौ वरन नरन में उद्धत निजु निजु पटह वजायौ॥४॥

दोहा—आयो मदति सुजान दलु, फतेअली सुनि कान।
कोस आठ चलें कोलतें आयौ देतु निसान॥५॥
असदखान हूँ कूँच करि आयौ कोस छ सात।
काहू की मानी नहीं समुझि वैर की वात॥६॥

कवित्त—उद्धत असदखान क्रुद्ध को निधान जान,
लेन उनमान फतेअली ने पठायौ दूत।
कहियौ नवाव सौं सलाम मैं भी हाजर हौं,
जानत न कौल दरपुस्त यह मेरा कूत॥
ईधर न आऔ तौ मेहर फुरमाऔ मुझै,
वन्दे हम साहि के हमेसा हमें तुम्हें सूत।

खातिर न आवै तो सुनाही बंदा बंदगी मैं,
मौला जिसै देहिगा रहैगा खेत मजबूत ॥७॥

सुनी दूत बानी महामानी खानजादै जब,
हियै अहदानी हैं रिसानी देह तासमैं।
दूत कौं बुलाय कही जाह तेरे आगा पास,
कोई रोज चाहे जान जाना तौ अत्रास मैं ॥

मुझे आया जाने जीया मानें तौ ठिकाने रहि,
फजर की गजर बजाऊँ तेरे पास मैं।
लाऊँ उसै रास मैं सभा समैं सबै सुनाइ,
तेग ही के त्रास में हुतास जैसे घास मैं ॥८॥

द्रुमला

ऊतरु यह दैकै दूत पठैकै असदखान यह रोस भर्‌यौ।
बोल्यौ सब वीरन कुल के धीरन जिन न चरन रन उलटि धर्‌यौ ॥
तुम करौ तयारी सब इस बारी मैं दिल यह इतकाद कर्‌यौ।
मुझको तो लरना देर न करना आइ साहि कौ काज पर्‌यौ ॥९॥

दोहा—असदखान असवार ह्वै, जबहीं कियौ पयान।
तेअली के चर तबै खबर करी यह आनि ॥१०॥
न कै हलकारा ने दौर ॥
जो कछु करनी गौर ॥११॥
?

फहरान धुजा मनु असमानु। कै तड़ित चहूँ दिस तरतरान ॥
सज्जे हयंद जे भरे सान। गज्जे सुभट्ट लै लै दवान ॥
गति धीर धीर वह चली सैन। रजरंजित अम्बर अर्क ऐन ॥
डंका निनद्द छाये अहद्द। रनसिंह तूर बेहद्द सद्द ॥
यह फतेअली हू खबर पाइ। आयौ सहस्र द्वै हय बनाइ ॥
नौबत निसान बहुमान अग्ग। गज ऊपर बैठ्यौ धरि उमग्ग ॥
चार्‌यौ निसान चार्‌यौ दिसान। फहरायति आवति धरि धवान ॥
चढ़ि चार घटी असमान भान। सुत साबित खाँय अरु असदखान
दुहुँ दलन परस्पर भई दीठि। हथियार चमकि चहुँधा बसीठि ॥
छुट्टी जँजाल दुहुँधा कराल। बंदूकबान हयनाल जाल ॥
अरु लौह जभ जग्गे बिसाल। मनु गजतु घोर दुहुँ ओर काल ॥

इति तृतीय अंक ॥

छप्पय—मिलो परस्पर डीठि बीर पग्गिय रिस अग्गिय।
जग्गिय जुद्ध बिरुद्ध उद्ध पलचर खग खग्गिय ॥
भग्गिय सद्द सृगाल काल दै ताल उमग्गिय।
लग्गिय प्रेत पिसाच पत्र जुग्गिनि लै नग्गिय ॥
रग्गिय सुरग्ग रंभादि गण रुद्र रहस आवज धमिय।
सन्नाह करकि उच्छाह भट दुहुँ सिपाह जब झमझमिय ॥

कवित्त—अनी दोउ बनी घनी लोह कोह सनी धनी
धर्मेनु की मनी बान बीतत निषंग में।
हाथी हटि जात साथी संगन थिरात औन
भारती में न्हात गंग कीरति-तरंग में ॥

खातिर न आवै तो सुनाही बंदा बंदगी मैं,
मौला जिसै देहिगा रहैगा खेत मजबूत ॥७॥

सुनी दूत बानी महामानी खानजादै जब,
हियै अहटानी हैं रिसानी देह तासमैं ।
दूत कौं बुलाय कही जाह तेरे आगा पास,
कोई रोज चाहे जान जाना तौ अत्रास मैं ॥

मुझे आया जाने जीया मानें तौ ठिकाने रहि,
फजर की गजर बजाऊँ तेरे पास मैं ।
लाऊँ उसै रास मैं सभा समैं सबै सुनाइ,
तेग ही के त्रास में हुतास जैसे घास मैं ॥८॥

द्रुमला

ऊतरु यह दैकै दूत पठै कै असदखान यह रोस भरयौ ।
बोल्यौ सब बीरन कुल के धीरन जिन न चरन रन उलटि धरयौ ॥
तुम करौ तयारी सब इस बारी मैं दिल यह इतकाद करयौ ।
मुझको तो लरना देर न करना आइ साहि कौ काज परयौ ॥९॥

दोहा—असदखान असवार ह्वै, जबहीं कियौ पयान ।
फतेअली के चर तबै खबर करी यह आनि ॥१०॥
तबहीं सिंह सुजान के हलकारा ने दौर ॥
फतेअली सौं रारि हैं जो कछु करनी गौर ॥११॥

पद्धरी

तबहीं सवार ह्वै कै सुजान । कलि भारथ को मनु भीमआन ॥
चहुँ ओर घोर बज्जे निसान । गज्जे जलद्द मानौ भयान ॥

फहरान धुजा मनु अंसमानु। कै तड़ित चहूँ दिस तरतरान ॥
सज्जे हयंद जे भरे सान। गज्जे सुभट्ट लै लै दवान ॥
गति धीर धीर वह चली सैन। रजरंजित अम्बर अर्क ऐन ॥
डंका निनद्द छाये अहद्द। रनसिंह तूर बेहद्द सद्द ॥
यह फतेअली हू खबर पाइ। आयौ सहस्र द्वै हय बनाइ ॥
नौबत निसान बहुमान अग्ग। गज ऊपर बैठ्यौ धरि उमग्ग ॥
चारयौ निसान चारयौ दिसान। फहरायति आवति धरि धवान ॥
चढ़ि चार घटी असमान भान। सुत साबित खाँय अरु असदखान
दुहुँ दलन परस्पर भई दीठि। हथियार चमकि चहुँधा बसीठि ॥
छुट्टी जँजाल दुहुँधा कराल। बंदूकबान हयनाल जाल ॥
अरु लौह जभ जग्गे बिसाल। मनु गजतु घोर दुहुँ ओर काल ॥

इति तृतीय अंक ॥

छप्पय—मिलो परस्पर डीठि वीर पग्गिय रिस अग्गिय।
जग्गिय जुद्ध विरुद्ध उद्ध पलचर खग खग्गिय ॥
भग्गिय सद्द सृगाल काल दै ताल उमग्गिय।
लग्गिय प्रेत पिसाच पत्र जुग्गिनि लै नग्गिय ॥
रग्गिय सुरग्ग रभादि गण रुद्र रहस आवज धमिय।
सन्नाह करकि उच्छाह भट दुहुँ सिपाह जब झमझमिय ॥

कवित्त—अनी दोउ बनी घनी लोह कोह सनी धनी
धर्मनु की मनी बान बीतत निषंग में।
हाथी हटि जात साथी संगन घिरात श्रौन
भारती में न्हात गंग कीरति-तरंग में ॥

खातिर न आवै तो सुनाही बंदा बंदगी मैं,
मौला जिसै देहिगा रहैगा खेत मजबूत ॥७॥

सुनी दूत बानी महामानी खानजादे जब,
हिये अहटानी हैं रिसानी देह तासमैं।
दूत कौं बुलाय कही जाह तेरे आगा पास,
कोई रोज चाहे जान जाना तौ अवास मैं॥

मुझे आया जाने जीया मानें तौ ठिकाने रहि,
फज्जर की गजर बजाऊँ तेरे पास मैं।
लाऊँ उसै रास मैं सभा समैं सबै सुनाइ,
तेग ही के त्रास में हुतास जैसे घास मैं॥८॥

दुमला

ऊतरु यह दैकै दूत पठै कै असदखान यह रोस भर्‌यौ।
बोल्यौ सब वीरन कुल के धीरन जिन न चरन रन उलटि धर्‌यौ॥
तुम करौ तयारी सब इस बारी मैं दिल यह इतकाद कर्‌यौ।
मुझको तो लरना देर न करना आइ साहि कौ काज पर्‌यौ॥९॥

दोहा—असदखान असवार ह्वै, जबहीं कियौ पयान।
फतेअली के चर तबै खबर करी यह आनि॥१०॥
तबहीं सिंह सुजान कै हलकारा ने दौर॥
फतेअली सौं रारि है जो कछु करनी गौर॥११॥

पद्धरी

तबहीं सवार ह्वै कै सुजान। कलि भारथ को मनु भीमआन॥
चहुँ ओर घोर बज्जे निसान। गज्जे जलद मानौ भयान॥

फहरान धुजा मनु अंसमानु । कै तड़ित चहूँ दिस तरतरान ॥
सज्जे हयंद जे भरे सान । गज्जे सुभट्ट लै लै दवान ॥
गति धीर धीर वह चली सैन । रजरंजित अम्बर अर्क ऐन ॥
डंका निनद छाये अहद । रनसिंह तूर वेहद सद ॥
यह फतेअली हू खबर पाइ । आयौ सहस्र द्वै हय बनाइ ॥
नौबत निसान बहुमान अग्ग । गज ऊपर बैठ्यौ धरि उमग्ग ॥
चार्‍यौ निसान चार्‍यौ दिसान । फहरायति आवति धरि धवान ॥
चढ़ि चार घटी असमान भान । सुत साबित खाँय अरु असदखान
दुहुँ दलन परस्पर भई दीठि । हथियार चमकि चहुँधा बसीठि ॥
छुट्टी जँजाल दुहुँधा कराल । बंदूकवान हयनाल जाल ॥
अरु लौह जभ जग्गे बिसाल । मनु गजतु घोर दुहुँ ओर काल ॥

इति तृतीय अंक ॥

छप्पय—मिली परस्पर डीठि वीर पग्गिय रिस अग्गिय ।
जग्गिय जुद्ध विरुद्ध उद्ध पलचर खग खग्गिय ॥
भग्गिय सद सृगाल काल दै ताल उमग्गिय ।
लग्गिय प्रेत पिसाच पत्र जुग्गिनि लै नग्गिय ॥
रग्गिय सुरग्ग रंभादि गण रुद्र रहस आवज धमिय ।
सन्नाह करकि उच्छाह भट दुहुँ सिपाह जब झमझमिय ॥

कवित्त—अनी दोउ बनी घनी लोह कोह सनी धनी
धर्मनु की मनी बान बीतत निषंग में ।
हाथी हटि जात साथी संगन घिरात श्रौन
भारती में न्हात गंग कीरति-तरंग में ॥

भानु की सुता सी कवि सूदन निकारी तेग
बाहत सराहत कराहत न अंग में।
वीर रस रंग में यौं आनंद उमंग में सो
पगु पगु प्राग होत जोधन कों जंग में ॥२॥

पद्धरी:—

धरि धरनि पाय धमकैत धीर। जहँ असदखान रन करिय वीर॥
सरसेल साँग समसेर चर्म। दुहुँ ओर सुभट किय घोर कर्म॥
इकदेत सीस परि खग्ग घाइ। विय लेत ढाल पर तिहिं बचाइ॥
इक साँग साँग संग्राम जुट्टि। बहु सेल सेल गए सीस फुट्टि॥
अरु किते वीर भाले तु भाल। जमडाड़ काढ़ रन में कराल॥
इक चड हथ्थ को दण्ड संधि। तकि तीर देत तूनीर वंधि॥
इक खंजर पट्टे अरु दुधार। वज्जंत परस्पर करि उधार॥
तन फसत अमिन तउ धसत जात। छतजात जात तउ करत घात॥
चहुँ ओर भुसुंडिनु की अपार। अति अरध धुंधवर संतसार॥
ज्यों असदखान आवतु रिसान त्यों लगी आनि गोली भयान॥
वह लगत मान तजि प्रान सान। तजि या सरीर बैठ्यो विमान॥

अरिल्ल—असदखान प्रानतु करि वित्तिय।
निरखि सेन स्वामी नहिं रित्तिय॥
पट्टिय भूमि कट्टि नर वीरन।
हट्टिय निट्टि पिट्टि धर धीरन॥
सस्त्रन डारि डारि कोउ वस्त्रन।
कोऊ देखि देत मुख में त्रन॥
सूरज के सूरन गहि लुट्टिय।

तुपक तेग जज्जालन छुट्टिय ॥
हय, गय, तोप, रहकला लिन्निय ।
भूपन वसन असन गहि छिन्निय ॥
चमू कोसचारिक लौं मारिय ।
असदखान कौ जीति निहारिय ॥४॥

दोहा—फतेअली कौं कोल में, तवही दियौ पठाय ।
आपु आइ निज गढ़न में देखे पितु के पाय ॥५॥
सदन सदन आनँद भये वदन वदन के फूल ।
सुत-सुजान के विरद-गुन सुनत श्रवन सुखमूल ॥६॥

इति चतुर्थ अङ्क ॥

सिद्धि श्रीमन्महाराजाधिराज व्रजेन्द्र कुँवार सुजान सिंह हेतवे कविसूदन विरचिते सुजानचरित्रे असदखान हतनो नाम प्रथम जंग समाप्तम् ॥

द्वितीय जंग ।

छप्पय—हुकम अचल वर भूमि सुभग सुरसरि जल विलसत ।
त्रिविध पवन जहँ गवन भवन द्युति ससिकर मिलि सत ॥
सेनानी सुर देत ताल वेताल लगावत ।
गंग धरनि भपि भंग रंग सौं डँवरु वजावत ॥
गिरिसुता सहित आनँद सौं दै चुटकी थेइ थेइ कहत ।
गन नाथ नचत तांडव रचत सुंड हलत विघननु दहत ॥

दोहा—ठारे सै अरु चार में, पावन सावन मास ।
महति करिय सुरेस की किय दखिनी दलनास ॥२॥

सुरपुर कौं जैसिंह गए बीते बहुत दिनान ।
हुतौ भूप आमेर कौ ईसुर सिंह अजान ॥३॥
तासौं दक्खिन के दलनु रोपी आनि सुजंग ।
माधौसिंहहि संग लै दियो देस मैदंग ॥४॥

सो०—देखि देस कौ चाल, ईसुर सिंह भुवालने ।
पत्र लिख्यौ तिहि काल, बदनसिंह ब्रजपाल कौं ॥५॥

दोहा—करी काज जैसी करी, गरुड़ध्वज महाराज ।
पत्र पुष्प के लेत ही त्यों आयौ ब्रजराज ॥६॥
तबहीं सिंह सुजान कौं बिदा कियौ बदनेस ।
सुभ नछत्र रवि ससि भले सोधि मुहूरत वेस ॥७॥

छप्पय—दस हजार असवार सहस द्वै लै पदाति गन ।
रथ गयंद हरदन्द जिते चहियत अपने मन ॥
सहस दोइ बरछैत जे न कबहूँ मुख मोरत ।
जुद्ध जुरैं जम रूप दंति के दंतनु तोरत ॥
फहरें निसान भुवमान दुति कटि कृपान आपुन कसिय ।
मंगल विधान द्विज दान दै मंगल गज ऊपर लसिय ॥
बज्जे पटह प्रचंड नूर भरपूर गरज्जिय ।
भूरि भेरि भंकार दुवन भय भार लग्गिय ॥
सुनि दुंदुभि धुंकार धराधर धर धर धुल्लिय ।
डिढ़न रहे डड्डार बाघ वनचर बन डुल्लिय ॥
हिंसत हयंद गज्जत करी रज उमंडि अंबर मढ़िय ॥
मानहुँ उदोत गिरि सिखर तें सूरज सौं सूरज चढ़िय ॥

कितेव्रिप्र कसि धनुपं जंग रंगनु के जेता।
किते रथनु असवार सुजस कीरति के देता॥
किते पुरान प्रवीन किते जोतिप के जाता।
किते वेदविधि निपुन किते सुमृतन के ज्ञाता॥
अप अपने कर्मनु में निपुन जयति जयति वानी रढ़े।
मघवान भान उपमान जब सैन साजि सूरज चढ़े॥१०॥

त्रिभंगी—केते मुगलाने सेख पठाने सैयद वाने बाँधि चढ़े।
काइथ खतरैटे लोह लपेटे देत चपेटे चाइ बढ़े॥
पाइक जे लाइक परदल घाइक लै धनु साइक लोह मढ़े।
कोलाहल वड्ढिय रविरज-मड्ढिय खल मन डड्ढिय देखि कढ़े॥११

छप्पय—पूरब परिय पुकार भूमि दिगपालन छंडिय।
पच्छिम तच्छिन गच्छि जमन ग्रह खलभल मंडिय॥
उत्तर सकल उदास त्रास तें ग्रास न भावै।
दच्छिन परयो भगान कहत सूरज कहुँ आवै॥
आतंक मानि दब्बे दुवन देव दिगीसनु सुख वढ़यौ।
व्रज-चक्रवर्ति वदनेस-सुत श्रीसुजान जब्बहिं चढ़यौ॥१२

इति प्रथम अंक॥

दो०—प्रथम कूँच कुँभेर तें करिके सिंह सुजान।
खान पान सैनहि दियौ बहुरयौ कियौ पयान॥१॥

दुपई—तीन कूँच अरु द्वै मुकाम में जाइ सु जैपुर लीनौ।
जाने खवर करी ता नर कों नरपति वहुधन दीनौ॥२॥

दो०—प्रथम ईसुरीसिंह ने मन्त्री दियौ पठाइ ।
फेरि आपुही आइयौ सूरज पै चित चाइ ॥३॥
जथा जोग सनमान करि कीनों मन्त्र विचार ।
ईसुर कही कि कुँवर जी हूजै आप अगार ॥४॥
आगे सिंह सुजान दलु पाछे कूरम भूप ।
जुद्ध काज उद्धत भए धरे वीर रस रूप ॥५॥
उते विकल दल दक्खिनो सनमुख पहुँचे आय ।
जिनके त्रास न सोवहीं दिल्लीपति उमराय ॥६॥

छप्पय—क्रुद्ध जुद्ध के काज दुहूँ भट भए सनम्मुख ।
सूरन के मुख नूर कायरनु सूखि गए मुख ॥
धरि धरि मुच्छनि हथ्थ सेलु सांगन पटतारत ।
लोह जन्त्र जमडाढ़ बान किरवान सँभारत ॥
धरि अग्ग पग्ग फर मग्ग में खग्ग कढ़त जुग्गिन जगिय ।
दुहुँ स्वामि-काम संग्राम में वीर वीररस में पगिय ॥७॥

त्रिभंगी—उथ्थौं मरहट्टे भाले पट्टे लै लै कट्टे सरपट्टे ।
इथ्थौं ब्रजवासी जे बलरासी हुवे हुलासी झरपट्टे ॥
हय सौं हय जुट्टे नेकु न हुट्टे तेगा कुट्टे सिर फुट्टे ।
छोहा भरि छुट्टे केसों लुट्टे मुट्ठक मुट्ठे भुज लुट्टे ॥
फिरि फेरि झटक्कैं पकरि पटक्कैं साँग सटक्कैं मार करैं ।
उक टक हटक्कैं देन दकुक्कैं सेल लटक्कैं श्रौन बहैं ॥
चिन हथ्थ भटक्कैं भरत चटक्कैं माम गटक्कैं देखि रहैं ।
इक जात पटक्कैं खग्ग खटक्कैं सीस कटक्कैं दौर गहैं ॥
पावैं नहिं जावैं भुजनि भुजावैं मुंड भिरावैं सम्हरावैं ।

खंजरनु चलावैं दंतन खावैं भौंह चढ़ावैं धरधावैं ॥
ढालनु ढलकावैं ढकनु ढकावैं डावत आवैं भटभारे।
इक औन सपेटे धूरि धुरैटे काल चपेटे भूपारे ॥८॥

छप्पय— धरि इक उद्धत जुद्ध चाल दखिनी दल खाइय।
सम्भू अरु सुखराम जंग वहुरंग मचाइय ॥
रहे खेत सत एक चेत बिनु मरहठ भाजिय।
निजु द्रगि लखि मल्लार हार अपने हिय लज्जिय ॥
वज्जत निसान वुल्लत फते श्रीसुजान घन वरसियौ।
यह खवर पाइ सूरज बली सहित देस कुल हरषियौ ॥९॥

इति द्वितीय जंग।

दो०—उसरि राउ मल्लार ने डेरा किये पछार।
पाछे हीं कूरम चल्यौ सूरज मल्ल अगार ॥१॥
बगरू महलनि पहुँच कै नरपति डेरा दीन।
चहूँ ओर अपनी चमू सावधान करि लीन ॥२॥
सनमुख जग न जोरहीं वरगी दिन दिन साँझ।
चहूँ ओर चमकत फिरैं ज्यौं विजुरी नभ माँझ ॥३॥
एक दिना कूरम नृपति सूरज मल्ल कुँवार।
मन्त्र कियौ दोऊन मिलि लीजै धाइ मलार ॥४॥
यहै मन्त्र करि कटककौं सावधान कहि दीन।
जैसे ही डेरा परत तैसें चलौ प्रवीन ॥५॥

छप्पय—वढ़ि वढ़ि निकसे वीर तीर तुपकनि को संधैं।
असि द्वै द्वै तूनीर तुंग तोमर धरि कँधै ॥

अनगन गोमुख तबल सबल बज्जत गल गज्जत ।
तज्जत भीति अभीति तुरगनु बेगहि सज्जत ॥
प्रभु हेत हेत जयदेत पग नेत नेत बानी कहत ।
अब लेन लेत अब लेत अब खेत खूँदि सम्मुख चहत ॥
श्रोनित सलिल सिवार केस बहु बेस परे जहँ ।
मेद गूद करि पंक सूकि पंकज सम सिर तहँ ॥
दादुर बोलत वाइ बेलि मुरझाइ परे कर ।
मलिन मीन तरफरत धरत बहु रूप तहाँ धर ॥
बहु गीध काग खग बसत जँह लसत तहाँ काहू बरिय ।
सूरज-प्रताप के ताप भुव छीन सरोवर सम करिय ॥
बिजय पाइ दुंदुभि बजाइ आए सुजान भट ।
बहुत भाइ सनमान पाइ बैठे सुजान तट ॥
कहत जुद्ध बिरतंत अन्न अरि को करि आइय ।
श्री हरिदेव प्रतापु आपु जस कीति बढ़ाइय ॥
यह खबर पाइ जयसाह सुत भर उछाह धनि धनि कहिय ।
बदनेस नंद ब्रजचंद पर खल खंडन बरु ते लहिय ॥८॥
सो०—ऐसे कैऊ जुद्ध, जीते सिंह सुजान ने ।
तब मल्हार ह्वै सुद्ध, कूरम सौं एको कियो ॥९॥
दो०—दोइ परगने लै दिए ठकुर सो मल्हार ।
माधव कौं समझाइकैं पठै दियौ ततकार ॥१०॥
पनु जान्यौ मल्हार को, मनु जान्यौ ठकुरान ।
तन जान्यौ सूरजमल्ल थपि ढुंढाहर देस ॥११॥
पवंगम—तब कूरम निज साथ सुजान बुलाइकैं ।
हय, गज, मुकताहार, बसन पहराइकैं ॥

कियौ अधिक सनमान विदा करि देस कौं।
कहियौ यह सन्देस नृपति वदनेस कौं ॥१२॥

सो०—ज्यों जैसाहि नरेस, करत कृपा तुव देस पैं।
त्यौं ब्रजेस वदनेस, करत रहौ हम पर कृपा ॥१३॥
फिरि आए निजु गेह, सहित नेह सब देह सौं।
जैसे भावतु मेंह, बहुत काल सूखा भएँ ॥१४॥

दोहा—पग भेटे वदनेस के, सूरज मन बच काइ।
तब उठाइ सिर सूँघिकैं लीनो अंक लगाइ ॥१५॥
तब सूरज कर जोरिकै कहे जुद्ध बिरतंत।
महाराज परिताप तें करि आए अरि-अंत ॥१६॥
सुनि सदेस बदनेस ने कियौ बहुत सनमान।
जथा जोग सब सूर कौं कीनो मान बखान ॥१७॥
इति तृतीय अंक।

सिद्धि श्रीमन्महाराजाधिराज ब्रजेन्द्र वदनेस-कुमार श्रीसुजानसिंह हेतवे कविसूदन विरचिते सुजान चरित्र वगरुमहल डूँगरी जुद्ध विजय वर्णन नाम द्वितीय जंग सम्पूर्ण।

तृतीय जंग

कवित्त— बाप विष चाखै भैया षटमुख राखै देखि
आसन मैं राखै वसबास जाको अचलै।
भूतनु के छैया आसपास के रखैया
और काली के नथैयाहू के ध्यानहू ते न चलै ॥

वैल, वाघ वाहन, वसन कौं गयंद-खाल
भाँग कौं धतूर कौं पसार देतु अचलै ।
घर को हवालु यहै संकर की वाल कहै
लाज रहै कैसे पूत मोदक कौं मचलै ॥१॥

दो०—ठारौ सौ रु पचोतरा, पूस मास सित पच्छ ।
श्री सुजान विक्रम कियो ताहि सुनौ नर दच्छ ॥२॥

अरिल्ल

वहुत दिना बीते निज देसहिं । तवहीं दूत कह्यौ सदेसहिं ॥
दिल्लीपति वकसी इहि देसहिं । आवत तुमसौं करन कलेसहिं ॥
सहस तीस असवार संग गनि । पैदल पील फील वहुतै भनि ।
जोरें तुरक सहस दस वीसहि । आवत तुमसौं करि मन रीसहिं ॥
इन्द्र नगर दच्छिन दिसि कड्डिय । निपट गरूर पूर हिय चड्डिय ।
कछू दिननु आवै मेवातहि । करिहै तहाँ अधिक उतपातहिं ॥
थातैं वेगि करौ कछु घातहि । जातें याकौ होइ निपातहिं ॥
यों कहि दूत नाइ निज सीसहिं । सूरज आइ कह्यौ व्रज-ईसहिं ॥
तुरक सहस जोरें दस वीसहिं । दिल्ली तें निकस्यौ धरि रीसहिं ॥
हमसे जुद्ध करन मन राखतु । महाराज मैं हूँ अभिलाषतु ॥
आवतु हैम तुम्हारौ पाइय । तौ याकौं कछु हाथ लगाइय ॥
नव व्रजेस सुनिकैं यह भाषिय । तात मतौ मो मन यह राखिय ॥

सो०—दिल्ली तें कढ़ि दूरि, जब आवै मैदान भुव ।
एक कपट करि सूर, याकौ दूर गरूर करि ॥४॥

दो०—मतौ मानि वदनेस कौ, सूरज उदित प्रताप ।
आपसु लै असवार है, करि हरदेव सुजाप ॥५॥

कूँच कियौ डेरा दियौ नौगाएँ मेवात।
तरन तनैने तेह सौं जुद्ध हेत ललचात ॥६॥

इति प्रथम अङ्क।

पवंगा—सूरज चारि उपाय प्रवीन सुचित्तई।
साम दाम अरु भेद दण्ड धरि नित्तई ॥
खल के मन की लैन वात करि सोल की।
विदा करी समुझाइ प्रवीन वकील की ॥१॥
देस काल वल ज्ञान लोभ करि हीन है।
स्वामि काम में लीन सुसील कुलीन है ॥
वहुविधि वरनै वानि हिये नहि भै रहै।
पर उर करै उदेग दूत तासौं लहै ॥२॥
खान सलावत पास वकील सुजाइकै।
करी सलाम कवाद अदाव वजाइकै ॥
नैननु लई सलाम सलावत खान ने।
कह्यौ कहा कहि वेग सुतोहि सुजान ने ॥३॥

दो०—कुँवर वहादुर ने प्रथम, तुमकौं कह्यौ सलाम।
फेरि कही कि नवाव इत आए हैं किहि काम ॥४॥
करत चाकरी साह की हम पायौ यह देस।
ताहि उजारत आप क्यौं तुमको कह्यौ संदेस ॥५॥
जो कछु तुम्हैं दिलीस ने, कह्यौ ताहि कहि देउ।
ता माफिक हमसौं अवै आप चाकरी लेउ ॥६॥

छंद निसानी—इसी गल्ल धरि कन्न में वकसी मुसक्याना ।
हमनूँ बूझत हौ तुसी क्यौं किया पयाना ॥
असी आवने भेदनू अवलौं नहिं जाना ।
साह अहम्मद ने मुझे अपना करि माना ॥
तखत आगरा, ग्वालियर, हिंडौन, बयाना ।
होडिल, पलवल्ल, अलवरौ, मेवात मध्याना ॥
वार पार मथुरा तलक हुवा फरमाना ।
वकसी की जागीर है वकसी मैं ठाना ॥
इनमें तेजे तुझ तरै तहँ करि मो थाना ।
दो करोर दे साहिनूँ सँग होहि सयाना ॥
होर कह्या है साहि ने सो भी सुन जाना ।
असदखान सरकार दा चाकर क्यों भाना ॥
तैं अपने मनमें गना चूड़ा तुरकाना ।
कै एक गल्ल कबूल्ल करि कैं हो मरदाना ॥
जब यों कह्यौ नवाब ने सुन दूत अमाना ।
मामल तिनहिं न होहुगी दिल अन्दर जाना ॥
उसी वक्त सिर नाइकै सो हुवा रवाना ।
आगे सिंह सुजान को भेजा परवाना ॥७॥

सो०—श्री व्रजेस को नंद, कागद बांचे वकील को ।
अंग अंग आनन्द, हरषि हिये हरदेव कहि ॥८॥
सूरज कियौ विचार, सब डेरा ठाढ़ै रहैं ।
संगन हय असवार पाइक चलो नवाब सें ॥९॥

है नवाब दस कोस, कोस पाँच औरौ चलैं।
दिखा दिखीकैं जोस रोस भरे लरिहिं भलै ॥१०॥

यौं सिंह सुजान, पाँच कोस को कूँच करि।
चौकी करी अमान, सहस सहस असवार की ॥११॥

पद्धरी—इहि भाँति पाँच चौकी बनाइ।
यह कह्यौ वचन तिन सौ सुनाइ॥
तुम जाउ चहूँ दिसि तें मरद।
पर वलहिं घेरि दीजै दरद॥
जहं खान पान पावै न जान।
अरु जुद्धवार सब सन्निधान ॥१२॥

०—ऐसे वचन सुजान के सबै सुभट उर धारि।
बकसी की तकसी करन, चले सेल पटतारि ॥१३॥

भुजंगप्रयात—भए सैद के लोग सबै इकट्ठे।
मनौं सिंह की संक सो रोझ पट्ठे।
तहीं सोर बाढ्यौ कहें जट्ट आए।
करौ सावधानी रहौ ठौर ठाए।
सबै सैद की फौज यौं खलभलानी।
लगें आग के ज्यों उठै औटि पानी
कही दौरि काहू सुनी आप बकसी।
लगी एकही बारही में धमक सी।
घरी एक में चेत ह्वै वीर बोल्यौ।

घणी वार लौं आपनों सीस डोल्यौ ॥
करौ वे करौ वेगही सावधानी ।
बुलाओ नकीबो नहीं वात मानी ॥१४॥

दो०—तब नकीब सों यौं कियौ हुकुम सलावतखान ।
तोप वान अरु रहकला चौकस करौ दवान ॥१५॥
तबही सूरज के सुभट निकट मचायौ द्वंद ।
निकसि सकै नहि एकहू, कर्यौ कटक मसमुंद ॥१६॥

इति द्वितीय अंक ।

छप्पय—छुट्टन लगे ब्रह्मण्ड चण्ड कोदण्ड भुसंडी ।
जबर जंग घनघोर मारु गोलन की मंडी ॥
आस पास रनबीर भीर बहु सोरनु पारतु ।
निकसि सकै नहि कोइ रैनि दिन जुद्ध बिचारतु ॥
इह भांति कछुक बासर गए तब बकसी रोसहिं भर्यौ ।
सरदार सहित दरबार में तिनहिं आपु आइसु कर्यौ ॥

दो०—तुम सवार इस बार हो निकसौ सबै अगार ।
मैं भी साहस देखिकैं एक करौंगा मार ॥२॥
खान सलावत को हुकुम ये अमीर सुनि कान ।
अपने अपने सब संग जुद्ध हेत ललचान ॥३॥

छप्पय— दमकि अगिनि नगन ज्वलित कंचन अम्बारिय ।
घन दामिनि के भेस गजनु घंटनु धुनि धारिय ॥
गहन गरज घर वाजि साज साजे बहु रंगनि ।

तंगन लिए पतंग मनौ इम भरत छलंगनि ॥
अंगन अनूप कवचनि कसिय लसिय मनौ फनिधर खरे।
हयनाल हंकि हथनाल हुव सुतनलि सनमुख धरे ॥४॥
दै दै दिघ्घ निसान वान नीसान अग्ग धरि।
चढ़ै गयंदनु पिट्ठि दिट्ठि अति रोस रंग भरि ॥
चँवर चलत चहुँ ओर चारु सिप्पर चमकावत।
चलत चमू चतुरंग मनहु पावस घन धावत ॥
ढुक्कत तवल्ल इक्कगल्ल खमल्ल भल्ल फेरत भले।
सूरज-प्रताप-पावक निरषि मनु पतग आवत चले ॥५॥

दो०—तवहीं सिंह सुजान सों, कही दूत ने धाय।
आजु तुरक वाहर कढ़े, सजे सैन बहु भाय ॥६॥

सो०—सुनि तहँ सिंह सुजान, चारयो चौकी दृढ़ करी।
सहस दोइ लै ज्वान, आपु चल्यो पुठवार कौं ॥७॥

भुजंगी—छुटे एक ही बार सो जुद्ध काजै।
जुटे जाइकै धाइकै छोह साजैं ॥
खुटे खग्ग हथ्थौं अरब्बीनु चढ्ढे।
हटैं नाहिं कोऊ सबै साथ बढ्ढे ॥
चहूँ ओर सौं सोरयौं घोर छायौ।
मनौ सिन्धु सद्दे हवा को हलायौ ॥
किहूँ सेल सम्भारिकै हाँक कीनो।
बियें तेग सौं काट कै डारि दीनो ॥
कहूँ सेल सन्नाह कौं फोरि वैठे।

मनौ भानुजा में फनी जात पैठे ॥
लगे तीर तीखे कछू भाल दीसैं ।
मनौ तीन नैना धरैं ईस रीसैं ॥
किते भाल भालेनु सों लाल कीने ।
मनौ फाग के ख्याल के रंग भीने ॥
पलक एक ऐसे भई मार भारी ।
लखैं दूरि होतें हमैं रैन चारी ॥
घए सूर कै सूर द्वै पाइ अग्गें ।
डगाने नहीं स्वान के लाग भग्गें ॥
जिन्हें स्वामि के काज की लाज भारी ।
रचैं खेत सूती नहीं संक धारी ॥८॥

दो०—अली कुली सु फतेअली कुचरा गए पलाइ ।
सलतखाँ रु हकीमखाँ ए पग रहे गडाइ ॥२॥

इति तृतीय अंक ।

दो०—दुहूँ गयंदन पै चढ़े, धनुष बान गहि हत्थ ।
जम-किंकर जिमि कोह कै, बरनु काज समरत्थ ॥१॥

संजुता—रन मैं न घाट रलाइयै । धनुबान लै समुहाइयै ॥
बनु आपनौ सब संग लै । विकटैं तुरीन उमंग लै ॥
निहि घेरि जहँ अरराइए । पल एक माहिं ढपाइए ॥
जग मैं सु तिनके साथ के । करि एक एहिं हाथ के ॥
सरदार जंग रंग मैं । अति गाज गाढ़ा अंग मैं ॥

तजि कैं हथ्यारनु पिट्ठि दै । धस गए लसकर निट्ठि दै ॥
ब्रज-वीर हू तिन संग ही । चलि गए कटक ठमंग ही ॥

दो०—तबहीं बकसी के करक भलभल थरी अपार ।
आए आए सब कहैं सूरज सुभट उदार ॥३॥
घरी चारि डेरा लुटे बुटे तुरक बेहाल ।
जट्ट जट्ट कहतें फिरैं सबनै जान्यौं काल ॥४॥
फेरि बगद ब्रज-वीर सौं आए ताही खेत ।
जहाँ परे रुस्तमवल्लो अरु हकीमखाँ रेत ॥५॥

कवित्त—चौंकतु चकत्ता जाकै कत्ता की कराकनि सौं,
सत्त की सराकनि न कोऊ जुरै जग है ॥
कैयक अमीर मीर धीर तें फकीर करै,
वीर बलवीर कों सदा ही सुभी संग है ॥
सूदन सकल देस देसन अदेस भयौ,
भाजत दुवन ज्यौं त्तियैं तुरंग तंग है ।
जैति कौं निधान तेज भान के समान मानौ,
आजु जहान में सुजान सुख रंग है ॥ ॥

सवैया—जुद्ध जुरैं न मुरैं ब्रज-वीर सुसेलनि सों धकपेल मचाए ।
जुग्गिन खप्पर पूरि नची पर के सिर दौर हरै पहराए ॥
फेर फिरे तन श्रौन भरे मनु भोर के भान सुरेस पैं आए
देखत सिंह सुजान अमान भुजान भरे उठि अंक लगाए ॥

त्रिभगी—बाजे सहदाने सुजस पुराने तूर पुराने गुन गाने ।
बकसी दल भाने मंगल माने यौं सुख साने हरषाने ॥

आए अतुराने बाँधे बाने जे मरदाने समुहाने।
ते कंठ लगाने दै बहुमाने सूरज माने जग जाने ॥८॥

इति चतुर्थ अंक।

तोमर

तबहीं सलावत खान। मन में भयो कलिकान ॥
हत जानि दोऊ बीर। अब को धरै रन धीर ॥
जबहीं सु साम उपाइ। अपनें हियें ठहराइ ॥
तबहीं बकील बुलाइ। कह्यौ बहुत समुझाइ ॥
तू जा सुजानसिंह पास। हमसौं करै इखलास ॥
सब मुल्क उसको देहुँ। अरु आपने संग लेहुँ ॥
ज्यों बनैं त्यों तू लाउ। करिहौं बड़ौ उमराउ ॥
जब यों कही नवाब। सुबकील दीन्ह जुवाब ॥
न कहुन आपु नवाब। त्यों कहौं जाइ सिताब ॥
गहि यों चल्यौ सिर नाइ। तिहिं बार आयौ धाइ ॥
जहँ हो प्रतेम कुँवार। रन भूमि कौ जितवार ॥
तिहि देखि सिंह सुजान। कछु लग्यौ मृदु मुसिकान ॥

दोहा—देखि भेज्यौ सु नवाब ने सो सब सुनी सुजान।
कही कि कहौ नवाब सौं हमसौं सधै प्रमान ॥२॥
तब सूरज ने यों कह्यौ मंद मंद मुसिकाइ।
तेरा जाइ सलाम तू कहियो मोर नवाइ ॥३॥
ये मरदों हमनें यहाँ माहि न मारे मिल।
ज्यों आवत रन माहि के त्यों नवाब के निग ॥४॥

जैसी कही नवाब की मानी सिंह सुजान।
त्यौंहीं सूरज की कही करी सलावत खान ॥५॥
श्री सुजान के पूत को हरवलु लियौ नवाबु।
कूँच ढुँढाहर कौं कियौ दोउन गाँठ्यौ दावु ॥६॥
मुस्तकीम लखि तनय कौं हिय हरदेव मनाय।
धायो आयौ व्याह को रैन दिना इक भाय ७॥
तीन कर्म मैं एकहू जो मथुरा में होय।
फेरि न आवे जगत में यह विचार चित टोइ ॥८॥
दोइ कर्त परवस निरखि एक जानि निज हाथ।
कर्‌यौ व्याह मथुरा पुरहिं कृपा पाइ यदुनाथ ॥९॥

इति श्रीमन्महाराजाधिराज श्रीव्रजेन्द्र बदनेस कुमार श्री-सुजान सिंह हेतवे कवि सूदन विरचिते सुजान चरित्र सलावतखाँ समर विजय वर्णनो नाम तृतीय जंग समाप्तम्।

चतुर्थ जंग

छप्पय—खुलित केस अधर खुलित भेस लोचन दिनेस-सिसु।
चन्द्रभाल त्रय नैन ज्वालमाला कृपाल किसु॥
कर कपाल नौगुन सुव्याल संग स्वान माल-धर।
असि त्रिसूल पट्वांग डमरू कर भस्म दिगम्बर॥
सिवसिवानंद समसान गृह समर सुरापानहिं करहिं।
जय बटुकनाथ जगनाथ जय भूत साथ जय उच्चरहिं ॥१॥

दो०—अष्टादस षट बरस रितु पावस भादौं मास।
सूरज है मनसूर संग किय पठान दल नास ॥२॥

सुतुर सवार सवार हो चल्यौ चाल उत्ताल !
पहुँच्यौ आइ सहार में जहाँ कुँवर व्रजपाल ॥१०॥
करि सलाम कागद दयौ अरज करी यह बोल।
सफदरजंग नवाब अब डेरा कीने कोल ॥११॥
सफदरजंग नवाब को कागद बाँचि सुजान।
अरज करी बदनेस सौं तबही बुद्धि निधान ॥१२॥
सुनि व्रजेस अज्ञा दई करनौ याकौ संग।
पै इन तुरकन सों कछू बूझतु नहीं प्रसंग ॥१३॥
जौ यह भेज्यौ साहकौ चल्यौ पठाननु पास।
तौ तोहूकौं पहुँचनौ पै न करौ बिसवास ॥१४॥
आइसु लै बदनेस कौ सुभ दिन कियौ पयान।
ठौर ठौर की फौज कौं भेजि दये फरवान ॥१५॥
भले भले सरदार जे ते सब पहुँचे आइ।
तौ लौं सफदरजंग कौ रुक्का आयौ धाइ ॥१७॥
देखत रुक्का कुँवरजी कही हरौ लहि बोल।
अब बहीर चलती करौ काल्हि पहुँचनो कोल ॥१८॥
हुकुम पाइ कुतवाल ने दई बहीर लदाइ।
सूरज सूरज उदित ही चल्यौ कोल कूँ धाइ ॥१९॥

इति प्रथम अंक।

गाहा—सुनियं खबरि वजीरं बदन-तनं आइय सह सूरं।
इसमाइल तिहि अग्गं दिय पठाइ छाइ सुखपूरं ॥१॥
कुंड०—सूरज इस्माइल मिले दुहूँ परस्पर धाइ।
ज्यौं सूरज भुवसुत मिलत एक रास में आइ ॥

एक रास में आइ दुहूँ आनंदन छाए।
इसमाइल लै आइ मिसिल डेरा करवाए ॥
करवाए सनमान भेज मीरन मन सूरज।
भूरज राखन हार जबै आयौ सुनि सूरज ॥२॥

सो०—सफदरजंग नवाव, आयौ जान सुजान कौं।
हियैं मिलन कौ चाव करि बैठ्यौ दीवान तब ॥३॥
खबरि भई तिहिं बार सूरजमल्ल कुँवार कौं।
कही कि औ दरबार तौ चलि मिलौं नवाव सौं ॥४॥
यों कहि सिंह सुजान त्यार भयौ दरबार कौं।
जे निजु कृपानिधान तिनु सिरदारनु संग लै ॥५॥

कवित्त—आयौ सिंह सूरज हिन्दू तो सम न दूजो और
सुनत वजीर न समात फूल्यौ अंग मैं।
आगे उठि लीनौ भरि मोद अंक भीनौ बहु
कीनौ सनमान सबही के परसंग मैं
बूझि कुसलात नहि हाथ सौं सुजान हाथ
बैठक बनाइ इकबाल के प्रसंग मैं
और उमरावन की भीर मैं दिपत दोउ
भानु सुत सोहैं ज्यौं सुरासुर सग मैं।

छप्पय—तब वजीर मनसूर कुँवर सन बूझियौ।
[illegible] [illegible] मैदान आपनो सूझियौ ॥
[illegible] अलमद खान पठान अरुझियौ।
[illegible] करि [illegible] सौं जूझियौ ॥७॥

दो०—नवलराइ मार्यौ नहीं मार्यो मोंहि पठान।
तौ लौं कल नहिं दें उगौ जौ लौं इस तन जान ॥८॥
रमजानी अरु इसाखाँ मीर वका ए साथ।
आए जुजवी फौज सौं नहीं इन्हौं के साथ ॥९॥

पवंगा—नहीं इन्हौं के साथ रिसाले साह के।
रेजा ओर अमीर न खातिर खाह के॥
मेरा तौ इतकाद एक है तुज्झ सौं।
अब करना सो कहे कुँवरजी मुज्झसौं॥
केती लाए फौज और क्या आवनी।
सो सव लेउ वुलाइ न देर लगावनी॥
जो कोइ तेरे साथ मिलैगा आइकै।
करनी तिसकी और मुझे सुख पाइ कै ॥१०॥

दो०—यौं सुनिकै वदनेस-सुत ता वजीर के वैन।
वोल्यो तासौं अरि-दवन हियैं वढ़ावन चैन ॥११॥
ठाकुर साहिव ने कह्यो मो सों चलती वार।
जो कछु हुकुम नवाव कौं करनौं तुमकूँ सार ॥१२॥
ऐसे वचन सुजान के सुनिकै सफदर जंग।
वोल्यौ सव हिन्दून में है व्रजेन्द्र सुख-रंग ॥१३॥
यौं कहिकैं मनसूर ने लै मोतिन की माल।
श्रीसुजान के कंठ में डारी होत खुसाल ॥१४॥
श्रीसुजान सिरु नाइकै करि सलाम कर जोरि।
अरज करिय मनसूर सौं अपनी वुद्धि वटोरि ॥१५॥

कवित्त—हम जिमींदार सरदार किए आपु आइ
हमैं निरधार बंदगी में नित जानौगे।
राजा राना राय उमराय सब साहिब के
कहे एक बार के अनेक करि मानौगे॥
सूदन सुजान कहै साहिब नवाब सुनौ
करनौ है मोहिं जोई मुखतैं बखानौगे।
चक्कवै चकत्ताजू के चोरनु कौं चूर करि
चुगल चबाइन कौं चौकस कै भानौगे॥१६॥

दो०—ऐसे वचन सुजान के सुनि वजीर मनसूर।
बोल्यौ जो हम तुम मिलैं तौ सबहोय जरूर॥१७॥

इति द्वितीय अंक।

दो०—फिर बीते द्वै तीन दिन सफदरजंग नवाब।
कहि भेज्यौ नृप-कुँवर कौं करियै कूँच सिताब॥१॥
यह सुनिकै सूरज कही अबही डंका देउ।
जितकौ कूँच नवाव कौ तितकौ पैंडो लेउ॥२॥

कवित्त—डंकनि के सारे चहुँ ओर महाघोर धुरे
मानो घन घोरि घोरि उठे धुव ओर तैं।
धवल पताका ते बलाका नील पीत श्याम
कैयों रंग रंग के विहंग आदि मोर तैं॥
मीन मनु दामिनि गयंद-मद नीर पाट
बाजत हयंद ज्यौं परतु जल जोर तैं।

पार्वस-प्रकास कौं चढ़त पाक-सासन ज्यौं
सफदरजंग ने पयानो कर्यौ कोरतैं ॥३॥

पादक कुलक—

सिंधुज-गंज दैइकै पाछैं। डेरा किए कटक लै आछैं।
कछुक दिननु मुकाम करवाए। पुनि धाये मारहरें आए॥
असी हजार हयंद इकट्ठे। सफदरजग संग भए पट्ठे॥
पंद्रह सहस संग सूजा के। धरा धराके धीर लड़ाके॥
ऊँट गयंदनु की को बूझै। पैदल कौ जु अखैदल सूझै॥
सफदरजंग जंग कौं कोप्यौ। डेरा जाय नदरई रोप्यौ॥
कारी नदी उतरि अतुरानौ। कासगंज पहुँच्यौ तररानौ॥
फिर करि कूँच नौलखा लीनौ। तहाँ व्यूह रचना कौ कीनौ॥

दुपई—यह सुनि अहमदखाँ पठानने सब पठान सों भाखो।
अब वजीर आयौ समुहायौ तुम क्या मसलति राखो॥
आवन कहत रुहेले ते भी आए कछू न आए।
जिसे तेग बाँधे की हिम्मति ते क्या रहैं दुराए॥
रुस्तमखाँ भाई से कहना अब हरीफ चढ़ि आए।
मऊ पठान बारहे सैयद काहे बिरद कहाए
यौं सुनि अहमदखाँ का कहना सब पठान उठि धाए।
जो पठान तिसकौं तो लरना ऐसे वचन सुनाए ॥५०॥

दो०—चलत अहम्मदखान के जेती जाति पठान।
लरके जोरु सँग धरैं आए बुद्धि निधान ॥६॥

सफदरजंग नवाब तैं पाँच कोस के बीच।
गंगा खादर देखिकैं डेरा किए नगीच ॥७॥
अहमद खाँ सनमुख भयो यह सुनि सफदर जंग।
मसलति करी सुजान सों करनौ कहौ सुढंग ॥८॥

सवैया

सुनि सूरज भूरज राखनहार विचार यहै निरधार कह्यौ।
अब जग कियैं बिन रंग नहीं वह गंग के तीर पठान रह्यौ ॥
तुम सैन सजैं पुठवार रहौ अब आयसु देउ न और सह्यौ।
हम जाय जुरें पहिले उनसौं तुम गौर करो लखि लोह बह्यौ ॥९

छप्पय—चन्द्रभाल, विप भू कराल, सुरभोग मंद हँसि।
कंबु कंठ, मद कोह रोग रिपु कृपा श्रीय ससि ॥
सुर-गज गति, सुर बाजि चढ़िय, सारंग धनुप लसि।
कामद गाय सुकित्ति, कामद्रुम करहि वृपभत्रसि ॥
रंभादि सक्ति भूपहिं प्रभा कौस्तुभ मनि उर उर वसिय।
यों भूरज राख्न रतन-जुत सागर सम सूरज लसिय।१०

अरिल्ल

तीन कोस सूरज भुव लिन्निय। घेरे पठान सबै इन किन्निय।
चारिहुँ ओर धूम करि दिन्निय। तऊ पठान रोस नहिं भिन्निय ॥
कछू पठान बान दे छुट्टिय। इतहु बान दबान बहु छुट्टिय ॥
ऐसे दोऊ तीन दिन बित्तिय। बंगस-सुत भेदहि चित चित्तिय ॥
बोलि दूत निहिं वार पठाइय। सूरज पास जाइ नू भाइय ॥११॥

नीसनी—भाई सूरजमल्ल से कहना यह भाई।
हम तुम वन्दे साह के बुझे न लराई॥
जो तुम संग वजीर कैं तौ भी नहिं बुझै।
जमींदार सौं आइकै जमिदार न जुझै॥
इस वजीर दा संग क्या करना था तुझै।
जिसकौं अपना गैर का कुछ सोच न सुझै॥
हम तौ अच्छै आप सें यों कहि पठवाया।
तुमसैं हम नहिं लड़ैंगें क्यौं आन दवाया॥
सफदर जंग नवाव ते मेरा है दाया।
उसकौं आगे दै लड़ौ कीजै मन भाया॥१२॥

दुपई—जैसें कही अहमदखाँ ने तैसे अरज करी है।
श्री सुजान यह सुनि कै भाखी अब तौ रारि खरी है॥
अब तौ रारि वनेगी जैसें तैते लरनौ आयौ।
काल्हि वजीर हरीफ तुम्हारो भोरहिं आवै धायौ॥१३॥

दो०—सूरज हू मनसूर सौं कहि भेज्यौ ता बार।
ए पठान मारे धरे जौ तुम होउ सवार॥१४॥
सुनत कही मनसूर ने सुनियौ सिंह सुजान।
लरना इन पाजीन सैं मुझकौं क्या मैदान?॥१५॥
एती फौज करौ खड़ी जिसका यह उनमान।
घोड़ौं ही की लीद में मारौं आटि पठान॥१६॥

सवैया

पुनि यौं सुनि सिंह सुजान वली मनसूर के पास रिसाय गयौ।

अबै आप कहा फुरमावत हौ विन जंग कहूँ अरि जेर भयौ ॥
अब तौ सब बीस हजारहिं हैं फिर लाख जुरैं नहिं जाय हयौ ।
अरु जो तुमरे मन में यह बात तौ काहे कौं मोहि अगार दयौ॥१७॥

दो०—है मेरी मसलति यहै अब सवार तुम होहु ।
धीरज सौं ठाढ़े रहौ देखौ वजै सु लोहु ॥१८॥
सुनि वजीर तैयार ह्वै कही कि होहु सवार ।
सबही लसकर में कहौ बाँधें वेगि हथ्यार ॥१९॥
करि सलाम सूरज वली आगैं कियौ पयान ।
जहाँ मोरचा आपनो आयौ ताही थान ॥२०॥

इति तृतीय जंग ।

दो०—उत पठान अहमदखाँ इत वजीर मनसूर ।
उद्ध जुद्ध कौं कुद्धि कै रुपे खेत भरपूर ॥१॥

हरगीत

वेहद नद गरद में सुदुरद कढ्ढिय आरसी ।
लगि गोल सौं गहि गोल फुट्टतु करतु जनि ज्यौं फारसी ॥
तहँ जवर जंगनि अंग तें वहु कढ़ति धूम कराल सी ।
धुनि काल सी विकराल सी भयु पाइ मीचु डकार सी ॥२॥

भुजंगी

सुनें सद्द कौं जुग्गिनी जूह ठट्टे । थए प्रेत पूता लए बाँधि मुट्टे ॥
तहाँ कालिका काल लै संग धाई । सिवा ईस के धाम में यौं वधाई ॥
किती जट्टिछुटी गट्टुटी व्योम रंगा । महानी चुहूँ ने लई जागि जंभा ॥
विकारी चहूँ ओर तें चाइ चिल्हीं । यहीं काइरों कैं सुनें माइ ठिल्ही ॥

हुतौ बीच में धीर व्रजवीर गाढ़ौ । मनौ स्वर्न के वर्न कौ खंभ ठाढ़ौ ॥
कछू धीर धारे चले अग्ग बड्ढे । सबै सूर के सूर संग्राम रड्ढे ॥
तबै दूत ने मनसूर पासैं । करी बीनती जोर जा ओर रासैं ॥
सुनैं दूत की बात मनसूर मानी । तरफ दाहिनी को कमी फौज जानी ॥३॥

दो०—तब वजीर वा दूत कौं दै इनामु कहि खूब ।
जहाँ खड़ा सूरजबली तहाँ जाइया तूब ॥४॥
जो कछु कही नबाब ने सो कहि दीनो दूत ।
सुनत दाहिनें को मुर्‍यौ सूरज पन मजबूत ॥५॥
बढ़्यौ दाहिनी ओर कौं सूरजमल्ल कुमार ।
बल्लू, बलभ, गढ़पती राख्यौ आप अगार ॥६॥

अरिल्ल—

लखिय बीर बल्लू मन मोहिय । भ्रात पूत रन में परि सोहिय ॥
गहि कर तेग दई अरि सीसहिं । देखैं तो संग सुभट न दीसहिं ॥
तबही चित्त राजमत आइय । सूरज पास जंग यह ठाइय ॥
जबही बीर बाग गहि मोरिय । सूरज दृष्टि दई तिहिं ओरिय ॥

दो०—सूरज ने सुखराम सौं कही कि मामा बेग ।
जाहु जहाँ है चौधरी उड़ी बहुत क्यों रेग ॥८॥

इति चतुर्थ अंक ।

दो०—तबही अहमदख़ान पै खबरि गई भ्रमु पाइ ।
रुसतमख़ाँ कटि जंगकौं लीनी फौज उठाय ॥१॥

मुतियादाम—

अहमदखान सुनी तिहि बार । कहिय न बीर बजावहु सार ॥
तबै सुनि सादलखाँ किय हल्ल । बड़े सरदार महाभट मल्ल ॥
करी जित दौरि सुबंगसपूत । हुतौ मनसूर जहाँ मजबूत ॥
लराकनि आइ धरा कहि दीन । मरा कहिकै सुभ रौंक जमीन ॥
जरा रहियौ बहुखौ रिस भीन । खराकहि खंजर मारिय सीन ॥
कराक कराक सनाह कढ़ंत । छराक छराक धरा सुपढंत ॥
सराक सराक सरौ सननाइ । भराक भराक बिदारिय काइ ॥
पराक पराक परें भुजदण्ड । चराक चटक्कत हाड़ उदंड ॥२॥

छप्पय—यह पन महमदअली-तनय भट धरिय जग मँह ।
धाइय होत निसंक संक पारिय पर-दल कहँ ॥
तिहि लग्गिय भग्गिय सेर जंग बक्का रमजानी ।
राउ बनोच अहीर पिट्ठि दिय तजि दृग पानी ॥
लखि चलत चमू बिचलित कटक चकित उजीर सरोस हिय
रनधीर इसालौं बीर तहँ भरि चीर जगहि लहिय ॥

सारंग—

तब्बै रुहेलनु लै लै करी रेल्ल । खेलें मनौं फागु दोउ भये मेल्ल ॥
कोऊ चढ़्यो दंति दै दंत पै पाउ । काहू गही पुच्छ की राह कै दाउ
केती छनाछन्न बाजी नहीं नेग । मानो महामेघ में चंचला वेग ।
किन्नो रुमाल्यांन कौं मारिकै चूर । कढ़्यौ तऊ सीस हट्यौ नहीं सूर
हाथी तुर्यां मत्त हाथी पर्यो खेत । संग्राम में थापि कै काम के हेतु
संगूर कौ भागनो सो कहै कौन । मानो चढ़े गौन लागे महापौन ॥

अस्सी सहस बाज छोड़ी सबै लाज । जैसे कुलंगा बूटैं देखते बाज
जा खेत मंसूर भग्यौ सु धाँमीर । ताखेत सूजा रुप्यौ है महाधीर

इति पंचम अंक ।

कवित्त—गरद मसान किरवान बरछा बानन तें
रुस्तमखान घमसान घोर करतौ ।
कहूँ रहैं मुन्ड कहूँ तुंड भुजदंड झुंड
कहूँ पाइ काइ फर मंडल कों भरतौ ॥
सेल सांग सिप्पर सनाह सर श्रौनित मैं
कोट काट डारे धर पाइ तौ सौ धरतौ ।
हरतौ हरीफ मान तरतौ समुद्ध जुद्ध
कुद्ध ज्वाल जरतौ अराकनि सौं अरतौ ॥१॥

गरद गुबार में अपार तरवार धार
मानौ नीहार मैं किरनि भीर भान की ।
कहरि लहरि प्रलै सिंधु में अधीर मीन
मानौ धुरवान मैं तमक तडितान की ॥
ज्योतिन को जाल है कि ज्वाला को अचल चल
ऐसी जंग देखी तहाँ प्रबल- पठान की ।
भृकुटी भयान की भुजान की उभय सान
मंगल समान भई मूरति सुजान की ॥२॥

दो०—रुस्तमखाँ सनमुख लख्यौ करि सुजान दृग लाल ।
कालजमन के काल कौं ज्यौं मुचकुंद भुवाल ॥३॥

छप्पय—झलझलात रिस ज्वाल बदनसुत चहुँ दिसि चाहिय।
प्रलय करन त्रिपुरारि कुपित जनु गंग उमाहिय॥
तिहि लखि सब ब्रजवीर उमड़ि गन जिमि रंगनि धरि।
अगनि भरे उमंग जंग हित भुवभंगनि करि॥
दै अग्ग पग्ग फर मग्ग में रग्ग बग्ग सायुध धइय।
लै लै दयान मैदान मैं सब अमान सनमुख भइय॥४॥

कवित्त—गेंदा से गुल्फ गुलमेंहदी से अंत भार
कुएय कलित तास खोपरी सुभान की।
नासा गुलवासा मुख सूरजमुखी भुज
कलगा बधूक ओठ जीव दुति लाल की॥
कोकनद कर ज्यों करन गुल कोकन से
इंदीवर नैन बाल जाल अलि माल की।
पानी किरवानी सों हरयानी कर सूरज के
पर भूमि फूली फुलवारी मानौ काल की॥५॥

सो०—यह अचरज की बात दोऊ जीते जग में।
उत पठान हरखात इत सुजान नरसिंह सों॥६॥

दो०—रुस्तम खाँ तन दै छुट्यो भाजि छुट्यो मनसूर।
अहमद खाँ सूरज बली दुहूँ रहे मगरूर॥७॥
साठ सवारनु सों खड़ो रन में सूरज सूर।
तहाँ खबर पाई यहै भग्यो कूर मनसूर॥८॥
रहत जानि सुजान कों जुद्ध हेत ब्रजवीर।
अरज करी कर जोरिकैं ज्यों समुझै रनधीर॥९॥

सो०—सुनि महाराज कुँवार ए पठान दस सहस हय।
इत में साठ सवार कहा रारि कैसे बनै ॥१०॥

पद्धरी

इमि सुनत कुँवरवर नरनुनाह। विरम्यौ पलास वन की सुछाँह।
लखि पीत धुजा पुच्छिय पठान। इह खेत कौन खग्गिय अमान॥
तब कही दूत यह है सुजान। जिनि रुस्तमखाँ खाइय पठान॥
सो सुनत कही अहमदखान। सनमुख न जाइ इसके पठान॥
अपनी अनीक की राह देखि। यह कही सिंह सूरज विसेखि॥
मम फौज कौन विधि मिलै आय। सोई उपाय कीजै बनाय॥
जौ आह कही तौ कहत एहु। चलि कारी सरिता तटहिं लेहु॥
यौं सुनत सिंह सूरज गँभीर। कीनौं पयान गति धीर धीर॥११

दो०—तहाँ खबरि निज फौज की पाई सिंह सुजान।
कछूक मैंडू में रही कछूक मथुरा थान॥१२॥
त्यों ही सुनी वजीर ने दिल्ली कियौ पयान।
तब आयौ निज देस कौं आपनु सिंह सुजान॥१३॥

इति षष्ठ अंक।

सो०—मुख गयंद सिर चंद दुति अमंद वंदन धरैं।
जयति जयति रुवनन्द दुख निकंद आनन्द कर॥१॥

दो०—साहि जहानाबाद में जाइ फेरि मनसूर।
लिखि भेज्यौ मल्लार कौं आऔ आप जरूर॥२॥
अर्ध लक्ख हय लै चल्यौ दच्छिन तैं मल्लार।
खबर पाइ मनसूर फिर डेरा कियौ अगार॥३॥

मालती

के सनमान बुलाय सुजान। कियौ बहुमान वजीरहि आन।
लियौ सु अगार कुमार सुजान। कियौ सु पयान दुहूँ बलवान ॥४॥

दो०—एक ओर मल्लार दलु दूजैं सिंह सुजान।
उतहि रुहेले अग्ग धरि सनमुख भये पठान ॥५॥

चहूँ ओर धौसान के छाए सद्द अहद्द।
मनहुँ गंग के मिलन कौं आयौ सिन्धु बिहद्द ॥६॥

दोइ जाम बीतन लगे खड़े सुभट बिनु जंग।
तब सुजान के दल चलनु आगे करी उमंग ॥७॥

उततैं धायौ ताँतिया इततैं सिंह सुजान।
दु दबरि दल में परे जिहिं थल रुपे पठान ॥८॥

छंद—रुहेले पठानों करी यों घरी मार।
बली वीर जहाँ बजायौ घनौसार॥
कटे भू पटे सो हटे खेत पट्ठान।
जहाँ सिंह सूजा कर्‌यौ घोर घमसान॥
परे चारिहू ओर तें दक्खिनी टूटि।
भजे खेत पट्ठान लीने कछू लूटि ॥९॥

दो०—जंग जीति सूरजमल्ल आयौ जहाँ नवाब।
तब वजीर पट्ठान पै आगैं कियौ दबाव ॥१०॥

छप्पय—हैं रुलकान पठान सबै मन माँहि बिचार्‌यौ।
करि मल्लार सौं सधि बंगस आपनौ गुदार्‌यौ॥

तीन भाग भुव करी एक मनसूरहिं दीनी।
एक दई मल्लार एक अपनी करि लीनी ॥
उलख्यौ उजीर दिसि पूर्व कौं गंग तीर की राह गहि।
परदल विदारि परदेस तैं श्री सुजान आयौ घरहिं ॥११॥

सिद्धि श्रीमन्महाराजाधिराज श्रीव्रजेन्द्र कुमार श्रीसुजान सिंह हेतवे कवि सूदन विरचिते सुजान चरित्रे पठान युद्ध उभय वर्णनो नाम चतुर्थ जग समाप्तः।

पंचम जंग

छप्पय—अनकप-आनन अमल कमल-कर कोस-दोस-हत।
औपधीस सुभ सीस कोटि तैंतीस करत नत ॥
हस अंस-अवतंस-वंस भव भच्छि उजागर।
एक दसन सुचि वसन रसन नव निधि-सिधि सागर ॥
जगमात-तात उतपातहर जग विख्यात मोदक असन।
खनीय खन वानी वरद जयति जयति भूपक-लसन ॥१॥

दो०—ब्रह्म सिद्धि धरि विन्दु निधि वरस गतागत माह।
घास हरे पै कोप करि चढ्यौ सूर नर नाह ॥ ॥
हुतै नगर पुरहूत कै सूरज सफदर जंग।
दोउनि मिलि मसलति करी करनौ जो जो ढंग ॥३॥
तव वजीर मनसूर ने कही कि सिंह सुजान।
जिन्होंने मुझकौं तन दियौ तिन्हैं करौ बिन जान ॥४॥

अवल्ल मुफै वडगूजरै ताखन करना जानि ।
रफते २ और भी रहे मुखालिफ मानि ।५॥

मल्लिका—यौं कही वजीर धीर । बुल्लियौ सुजान वीर ॥
जो कछू कहैं नवाब । ताहि कीजियै सिताब ॥
साहि को हुकुम्म लेउ । आपुही मुहीम देउ ॥
सो वजीर चित धारि । साहि पै गयो विचारि ॥ ६॥

दो०—हुकुम साह को है यही तुमकौं सिंह सुजान ।
राउ बहादुर सिंह कौं ताखत करनै जान ॥७।
सरोपाउ समसेर दै फुरमायौ मनसूर ।
घासहरे पै कुँवर जी जाना तुम्हें जरूर ॥८।
सबै सैन तैयार हुव करि दुंदुभी धुकार ।
सिंह जवाहर निकट हुव जै जै शब्द अपार ॥९।

अनुगीत

तिथि त्रोदशी मनमुख सखी रवि राहु कों चल पाइ ।
धरि ध्यान हिय मधि प्रीति सों हरदेव कौं सिरनाइ ॥
शुभ लग्न में निरविघ्न चोट्ढय तनय सिंह सुजान ।
फहरान पीत निसान शुचल प्रताप पावक मान ॥
अति दीह दुंदुभि बज्जियं सुनि गज्जियं घनघोर ।
चल सज्जियं गलगज्जियं चहुँ ओर ज्यों पिक मोर ॥१०॥

कवित्त—धम्मत दिलाद सेना दुंदुभी धुकारन सौं
कुन्द दधि जात देस देस सुख जाही के ।

दिन दिन दूनौ महिमण्डलु प्रतापु होत
सूदन दुनी में ऐसे वखत न काही के ॥
उद्धत सुजान-सुत बुद्धि बलवान सुनि
दिल्ली के दरनि वाजें आवज उछाही के।
जाही के भरोसे अब तखत उमाही करै
पाही से खरे हैं जो सिपाही पातसाही के ॥११॥

इति प्रथम अंक

दो०—उग्ग दुग्ग बिंवौर धोस व्याल रूप है राउ।
ताकौं हूँ क्यौं आनिकै सूरज ज्यौं खगराउ ॥१॥
रवि राका मकरंद की सूरज रोपिय रारि।
हय-दल पैदल संग लै हल्ल करिय रिस धारि ॥२॥

छप्पय—ठुक्किय दिग्ध निसान पुंज गिरवर गन गुंजिय।
पीत केतु फहरानि देखि दुसमन मन मुंजिय ॥
चंचल तुंग तुरंग जंगहित भरत चलंगनि।
पाइक साइक संधि अगाहुव करत छलंगनि ॥
इम सैन साजि सूरज चढ़िय जिहि सम सूर न भूमि बिय
चढ़ि वीरविकट तिहिं दुग्ग तनु घोर दृष्टि चहुँ ओर दिय
जोजन अर्थ अकार दुग्ग दुर्गम मधि सरवर।
दच्छिन पच्छिम ओर प्रवल जग रह्यौ पूरि जर ॥
वसु हजार नर सुभट रहे समुहाय सस्त्र गहि।
लोह-जंच चहुँ ओर तासु तट कौन सकै लहि ॥

लखि ताहि सूर सूरजबली सिंह जवाहर सौं कहिय ।
तुम जग धनद-दिस तैं लहौ पुब्ब द्वार आपु न गहिय ॥

नूफा—खलभल परी दुग्ग मँझार । दलबल दपट देखि अपार ॥
कलबल करत नर अरु नार । छलबल कोट-ओट निहार ॥
दरबर धाइ सूरज सूर । अरबर पारियौ पर पूर ॥
हरबर कही राउ निहार । नर करौ सकल सम्हार ॥
झरबर होन लागी चोट । भर भर कागुरनि की ओट ॥
प्राची औ उदीची ओर । रारि माँची ऐसी घोर ॥५॥

छप्पय—उत्तर दिसि गढ़ विकट निकट जुहिय जग जाहर ।
सेनापति तिहि चारि रारि हित सिंह जवाहर ॥
है दवान किरवान बान धाइय तिहिं ठाहर ।
सहिय घोर घमसान तोप जजाल हियाहर ॥
बकुतारि फारि सुरचान कों मारि सुभट अरि उग्ग हिय ।
पुर द्वार तक्कि ठाढ़ौ बली सबै दुग्ग गुमसुंद किय ॥६॥

पद्धरी—

वह राउ महा धीरज-निधान । है बरी दौर मैं सावधान ॥
तब कही बीर क्यौं सुनसान । कह पल्टि गयौ गढ़ ते सुजान ॥
सो सुनत कह्यौ जो हुते तीर । है फौज जहाँ की तहाँ बीर ॥
तब संग तुम्हारे गए धीर । ते सब सच्छन देवे सरीर ॥
यह सुनत राउ चाँरा निहारि । सुन भान तान बाहन बिचारि ॥
फिरि धीर उठ्यौ वह सिंह संत । जिन चाहत है परदल-सुअंत ॥७॥

तारक—निजु मंदिर तै कढ़ि वाहिर आयौ।
लखि सैन सवै मन धीरज पायौ॥
गढ़ पूरव द्वार चल्यौ अनुरानौ।
तहँ आइ कह्यौ यह वैन सयानौ॥
एहि वार रहौ सव चौकस भाई।
अरि कौं नहिं देखन देउ जु खाई॥
समयौ वह धीरज ही धरिवे कौं।
नर वीर पराक्रम के करिवे कौं॥८॥

दो०—टूटि फूटि वहु सुभट गे दिखा दिखी इत उत्त।
रैनि भर भड़के भए जैसें अच्छर दुत्त॥९॥
निसा जानि सूरज वली वेलदार वुलवाइ।
सुभट हते जे दुग्ग तट तिन पैं दए पठाइ॥१०॥
जैसी पाइ भूमि जिन तैसी ओट वनाइ।
भुव खुदाई परिखा निकट दिए मोरचा जाइ॥११॥

इति द्वितीय अंक।

दुपई—या विधि वासर ईस समर दुहुँ ओर।
जवर जंग जज्जाल परिय घन घोर॥
चंडो चलत भुसंडी खंडी सैन।
मडी रारि उदंडी छंडी हैन॥
तव चित माहिं विचारिय वदन-कुमार।
चहुँ दिसि गढ़हिं निहारिय ह्वै असवार॥

दो०—पुर पुरजा पतिनी तनय बचैं दिसहूँ वित्त ॥
तौ सलाह करि राउ तू, है सबही के चित्त ॥५॥

सो०—यौ सुनि बोल्यौ राउ अब उपाय नहिं संधि कौ।
जो सब करौ दबाउ तौ जालिम कौं भेजियै ॥६॥
यह सुनिकै पुर लोग आए जालिमसिंह तट।
है अति बाँकौ रोग सो कटिहै तुमतैं बली ॥७॥

दो०—सबकी मसलति जानि कै जालिमसिंह विचार।
कौल वचन करि राउ सौं चल्यौ मिटावन रार ॥८॥

दुपई—जालिमसिंह बैठि नर वाहन जब गढ़ बाहिर आयौ।
जाकौं देखि सिंह सूरज नै बहु सन्मान करायौ॥
जो कछु अरज करी जालिम ने सो सूरज ने मानी।
तुरत आइ सो कही राउ सौं जो कछु दैनि बखानी ॥
तबही राउ कही जालिम सौं कहौ कहा करि आए।
कैसे करी सलाह कुँवर सौं तब जालिम समुझाए ॥
कहे दैन दस लाख रुपैया तोप रहकला सब्बै।
जबही ए पहुँचै सुजान पै उठै मोरचा तब्बै ॥
यह सुनि कही राउ मैं दैहौं दस के द्वैहू औरौ।
तोप रहकला देउँ न एकौ स्यानो कहौ कि बोरौ ॥९॥

सो०—ये सुनि जालिम बैन महा हठीले राउ के।
फिर न दिखाए नैन तरफरात ही ज्यौ तज्यौ ॥१०॥

दो०—जालिमसिंह मर्‍यौ जबै खबरि पाइ कै सूर।
जान्यौ अबही राउ को घट्यौ न नेक गरूर ॥११॥

पाव कुलक—

जालिम सिंह जु मोपै आयौ । ताको फेरि जुवाव न पायौ ॥
तातैं लेनो सोधौ पाकौ । तब उपाय करिहौं मैं ताकौ ॥
अमरसिंह मंझा सुत बोल्यौ । तासौं मंत्र आपनो खोल्यौ ॥
अब तुम जाउ राउ कें पासैं । देखौ वाके मन की आसैं ॥
अरु गढ़ को सोधो सब लैयौ चौहानन हू कौं समुझैयौ ॥
अमरसिंह गढ़ मै यौं पैठ्यौ । मानो सनि आठैं घर बैठ्यौ ॥
कुसल बूझि दोऊ बतराने । प्रथम राउ ए बैन बखाने ॥
एक बात मेरी सुनि लीजै । तापै अमरसिंह चित दीजै ॥
है जल पानि दुग्ग में जौ लौं । तौ लौं गहौ न तुमसे सौं लौं ॥
जब बारूद अन्न घिनि जैहै । तब छीनी हैहै सो हैहै ॥
नाहि तर लग्गत दुग्ग कें हारैं । अपने कर्म धर्म उर धारैं ॥
सगल सई भूमि करि देहौं । कोरनि सुता रची नाति पैहौ ॥१२॥

दोहा— परनी धरनी नरन की करनी है जो साथ ।
परि करनी भरनी हुओ फरनी प्रभु के हाथ ॥१३॥

सो०— ऐसे बचन अनेक नट गजर [illegible] जबै ।
तब जिस [illegible] अमरसिंह सें यों कह्यौ ॥१४॥

कवित्त— [illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥

जैसे जै विजै जगदीस ते जनम पाइ
जगत मैं जान्यौ त्यौंही तुहू भयौ चंड है।
जाकौ यह खंड चढ़ि आयौ बलवंड
सोई तोकौं धरि दण्ड महा उद्धत उदंड है ॥१५॥

वैतवै—

सुनी जब राव ने ये अमरवानी। भरो छल की तबै हिय बुद्धि ठानी॥
कही जब राव ने सुनि अमर भाई। सही तेरौ कहौ मो चित्त आई॥
घिर्‌यौ गढ़ जान कोऊ ना पतीजै। निसा ज्यौं होय त्यौंही तोप कीजै॥
निसा की सुनि सुवानी अमरमानी। सुजानैं पास ज्यौं की त्यौं बखानी॥
यही सुनि कै कही सूरज सुकीमी। नहीं तौजर गई हम जान लीनी॥
पठायो अमर! वाको माल आछैं। निसा वाकी करौ हमरी सु पाछैं॥१६

पद्धरी—साँचे वचन विचार वदन सुत के सबै।
अमरसिंह सिर नाइ गयौ गढ़ में तबै॥
माल सबै लदवाइ राव कौ तथ्थ ही।
दिल्ली दियौ पठाइ मनुज निज सथ्थ ही॥१७॥

दो०—पितु कौ कागद बाँच कै सुत ने माल सम्हार।
सूरज के अनुचरन सौं कीनौं ज्वाब विचार॥१८॥

खिमानंद ने जब करी अति ताकीद जताइ।
फतेसिंह तब यौं कही देहौं निसा कराइ॥१९॥

सो०—खिमानंद तुम जाउ कुँवर बहादुर सौं कहौ।
दीनो तुम कौं राउ जो चाहौ सो कीजिये॥२०॥

दुपई—खिमानंद यौं ब्याव पाइकै सूरज के ढिग आयौ ।
जो कछु कौतुक भयौ दिली मैं सो सब आनि सुनायौ ॥
सुनि सुजान मुसिकाइ राव की ए छल-बल की बातैं ।
कही कहा जानतु मैं नाहीं बड़गूजर की घातैं ॥
ज्यों पयपान भुजंगै दीजै केवल विष ही बाढ़ै ।
पटल पेटि ज्यों धरै दहन कन जहाँ परै तहाँ डाढ़ै ॥
ज्यों खल सौं कीजै सज्जनता सज्जन सौं खलताई ।
लहै न सिद्धि एक हू जग मैं कहा रंक कह राई ॥२१॥

दो०—बदी करै तासौं बदी करत दोसु नहिं होइ ।
अब याकौं हौं मारिहौं होनी होइ सुहोइ ॥२२॥

इति तृतीय अङ्क ।

दो०—माधव वदि छठि भूमि सुत सूरज लिय निरधार ।
दुर्गनैन निज दल चलन कहि भेज्यौ हिन वार ॥१॥
आस पास वा दुर्ग कौं सुभट रहैं जे घेरि ।
कहि भेज्यौं तिनसौं सुघन आजु न करनौ देर ॥२॥
[illegible] सब निसि रहे सुनि [illegible] की सद ।
[illegible] मैं दुर्ग पै [illegible] ॥३॥
[illegible] ॥४॥
[illegible] ।
[illegible] ॥५॥

दुपई—

यह सुनत राउ के वचनसवन मिलि चलत अरावौ राख्यौ।
चढ़ि दुग्ग कुँवर सौं मिलन आइहै चहुँ ओर यौं भाख्यौ॥
अब देउ पठाइ वेगि रथ वहलैं कढ़ै कबीला जैसौ।
सब लोग वाग कों लेउ काढ़िके सहित लाज जिय ऐसौ॥
वहु ए पुकार सुनि श्रीसुजान कहि यह वात हम मानी।
अब ह्वैहैं कहा गरीवनु मारैं निकसौ करैं अमानी॥
तब परे लोग खरराइ दुग्गतें सूरज की सुनि वानी।
ज्यौं जीरन जार तोरिकैं भाजै मीन देखि ढिग पानी॥
सब सस्त्र वस्त्र सौं जत्र तत्र ह्वै परे कूदि भयभीते।
मुख देत दुहाई श्रीसुजान की विकल भए मुख पीते॥
ते लिए राखि बदनेस नंद ने गढ़ खाली करि डारयौ।
सब रहै पाँच सै मनुज राउ संग सूने डंडा चारयौ॥१४॥

विजोहा—

देखि या हाल कौं दुग्ग के चालकौं। राउ वोल्यौ जबै पास देखे सबै॥
ढील क्यों है करी भाजिबे की घरी। प्रान राखौ अरे होहु मोतें परे
राउ देखौ इसौ सिंह धायौ जिसौ। इक्कमीयाँ तहीं वोलि उठ्यौ जहीं॥
राउ जी क्यों बकौ वख्त नाहीं तकौ। कै सुजानै मिलौ जंग कौकै पिलौ

चौवोला—

ऐसे वचन सुनत वढ़ गूजर उठ्यौ ढाल तलवार लियैं।
गयौ तुरत ही भौन भीतरैं जंग रंग की राखि हियैं॥
क्रुद्ध दीठि सों राउ गयौ घर लखि काइर मुख सूकि गए।
तजे तुरत अंग के आयुध टलाटली के ब्यौंत लए॥

राउ चढ़ौ प्रासाद सैनिकैं किये परिरंभन प्रान प्रिया।
मृदु मुसिकाइ मंगाइ वारुनी पान परसपर दिया लिया ॥१६॥

कवित्त—बैठे एक आसन सुवासन के वासन से
भूष उजासनु प्रकास बहु कीनौ है।
सरस विलोकि फेरि करके परस भए
दरसि दरसि दोऊ रति मति कीनौ है॥
भुजनि उसारि लीनी उरसौं लगाइ प्यारी
अरस परस अधरामृत कौं लीनो है।
दोऊ जलजात मुख मानो मनजात जान
इन्दु अरविन्दु कौ मिलापु करि दीनौ है ॥१७॥

सो०- फेरि राउ धरि धीर कह्यौ वैन वर बाम सौं।
प्यारी होत अधीर शत्रु मारि फिरि आइहौं ॥१८॥

छंद—कढ्यौ दुग्ग तैं राउ दै घोर निसान।
घरी तीन आसमान में ज्यौं रह्यौ भान॥
जुहे डेढ़ सै में रहे एक सौ ज्वान।
चढ़े राउ के संग आसा तजै प्रान॥
किलै पुव्व द्वारैं पिल्यौ आइयौ वीर।
तहाँ सूर के सूर की ही भरी भीर॥
तहाँ राउहू जंग कौं आन औसान।
लए हाथ टंकारि कम्मान औ वान॥
चल्यौ मंद ही मंद वैरीनु के फंद।
मनौं क्वार के वादरों में धस्यौ चंद॥

चल्यौ गाहतौ चाहतौ जूह के जूह ।
मनो पथ्थ के पूत पैठ्यौ चका व्यूह ॥
किधौं नीर गंभीर को चीरतौ ग्राहु ।
सुराधीस की सैन मैं ज्यौं धँसै राउ ॥
तवै चित्त चिल्यौ सुवड़ गूजरौ नाहु ।
लई काढ़ि समसेर धायौ महावाहु ॥
जिते में वदल्ला सुहल्ला कर्‌यौ तथ्थ ।
जहीं तेग तेगा कढ़े एक ही सथ्थ ॥
झमाझम्म वीती धमाधम्म ता ठौर ।
झरी फुलझरी सी मनौ विज्जु की झौर ॥
जुर्‌यौ देखि रावै वुटे तीनि ता वार ।
रह्यौ राव के संग मैं एक असवार ॥१९॥

छप्पय--तवै मेव यह कही वीर ठाढ़ौ रहि ठाढ़ौ ।
अव नहिं जीवत जाइ लौह करिहौं रन गाढ़ौ ॥
सुनत राव ह्वै क्रुद्ध जुद्ध मैं तेगहिं झारिय ।
तहीं मेव गहि छेव तुरंगम तैं गहि डारिय ॥
भूपारि परी द्वै तीनि असि वड़गूजर के अंग पर ।
लिय सीस काटि सथ्थी सहित राव रुण्ड सोयौ समर ॥२०॥

पद्धरी—

विन सीस पर्‌यौ वह राउ खेत । रन विजय शब्द सूरजहिं देव ॥
वज्जै सहदानै घोरि घोरि । वुल्लत फतूह सूरजहिं ओर ॥
पुनि श्री सुजान हूँ हरषि पाइ । भट भेटि जुद्ध श्रम दिय मिटाइ ॥
अरु सिंह जवाहर हू हरषि । निज सुभट भेटि मौजहि विरषि ॥२१॥

कवित्त—दलन दलैया दीह देसन दवैया उग्ग
दुग्गन दरैया खल-खंडन रह सूक्यौ सौ।
छिति के छितीसनु की छाती छनि छार भई
प्रेपत प्रताप तेरौ प्रबल भभूक्यौ सौ॥
सूदन सकल सिंह सूरज तिहारे धाक
धूमनु करत रहै दक्खिनी विभूक्यौ सौ।
सहित अमीर पीर धीर न धरत उर
चौंकि चौंकि चाहत चकत्ता चित चूक्यौ सौ॥२२

इति चतुर्थ अंक।

इति श्रीमान महाराजाधिराजब्रजेन्द्रनंदन श्रीसुजानसिंह हेतवे कविसूदन विरचिते सुजान चरित्रे वासहरौ विजय नाम पंचमौ जंग समाप्तम्।

षष्ठ जंग

छप्पय—धरि सत रज तम रूप स्रजति पालति संहारति।*
आरत लखि सुरराज विपति असुरन कौं पारति॥
धूम चंड अरु मुंड महिप रकता रज भंजति।
सिंभु निसुंभु चबाइ चारु दस लोकन रंजति॥
जाकी विभूति परब्रह्महू निरगुन तैं गुनमय बरनि।
मुनि देव मनुज सूदन रटत जयति जयति शंकर-घरनि

*रजोजपे जन्मनि सत्ववृत्तये स्थितौप्रजानां प्रलये तमस्पृशें, भाव का यह चरण है।

दो०—गत पुरान सत वरष सत मधुरित माधव मास ।
सूरज हित मनसूर कैं गह्यौ दिल्ली पै गाँस ॥२॥

पातसाहि अहमंद कें भौ वजीर मनसूर ।
पोता मलिक निजाम कौ वकसी भौ मगरूर ॥३॥

तूरानी वकसी भयौ ईरानी सुवजीर ।
नाचाखी दोऊन मैं दिल्लीपति के तीर ॥४॥

नीसानी—एक रोज पातसाह दी वकसी लै गरजी ।
विन वजीर दीवान में कीनी यह अरजी ॥
हजरत सफदरजंग मैं क्या अदव वजाया ।
नाजर फिदवी साहि का दै दगा खिपाया ॥
साहिजिहानावाद मैं जद सैं यह आया ।
तद सैं हुकुम हुजूर का नहिं एक वजाया ॥
पोता मलिक निजाम दा जव यौं वतराया ।
सो सुनिकें पतसाहि भी दिल मैं सव ल्याया ॥
तिसी वख्त मनसूर सैं यौं कहि भिजवाया ।
जाना अपने मुलक कौं हजरत फुरमाया ॥
फेरि साहि मनसूर कौं अहदी लगवाया ।
साहि जिहानाबाद तें तदही कढ़वाया ॥
वड़ा कुँवर अरु काइदा मनसूर गँवाया ।
दिल्ली सें वाहर हुवैं मनसूर रिसाया ॥
जे रफीक थे आपने तिनकौं वुलवाया ।
पूरव सैं निज फौजनूँ जलदी फुरमाया ॥

चाकर मेरा है वही जो आवै धाया।
घासहरै कौ कुँवर भी फरचा करि आया॥
खबर पाइ मनसूर भी खुसियौं से छाया।
तिसि वख्त मनसूर ने फरमान लिखाया॥
रहमति दै कहि आफरीं इलकाब बधाया।
कुवर बहादुर आवना मेरा करि साया॥
चाहौ मैडीं जिन्दगी तौ आवौ धाया।
यौं लिख सफदरजंग ने फरमान पठाया॥
घासहरैं था कुँवरजी रनरंग अठाया।
तिस कागज के वाँचतैं सूरज मुसिक्याया॥
अपना विरद सँभारिया दिल और न लाया।
अच्छी साइत देखिकै डंका लगवाया॥५॥

सो०—पुनि मिलि सिंह सुजान सफदरजंग वजीर सौं।
डेरा किए अमान खिदर बाग रविजा-तटहिं॥६॥

कलहंस—दिन दूसरैं मनसूर सूरज पास कौं।
दरबार ह्वै असवार सो इखलास कौं॥
लखि कैं वजीर सुजान हू सनमान कौं।
बहु भाइ अदब बजाइ दै बहु मान कौं॥
ढिग देखि सफदरजंग सिंह सुजान कौं।
सब पूछियौ बिरतंत आवन जान कौं॥
यह मैं मुकर्रर है किया तुम सैं कही।
अब तौ दिली दहवह करनी है ही॥

पाव कुलक—

अकबर अदल साहि धरि आगैं। सफदरजंग जंग अनुरागैं॥
अपनी चमू साजि गढ़ चढ्यौ। तूराननि पै अति रिस बढ्यौ॥
इसमाइल राजेन्द्र गुसाईं। सफदरजंग भए अगवाईं॥
तबही सूरज हूँ ने डंका। सब तैं आइ चढ्यौ रनबंका॥
तातैं अग्ग जवाहर धायौ। सजिकैं सैन दिली समुहायौ॥
सफदरजंग जोरि दल एतौ। चढ्यौ इन्द्रपुर कौ भय देतौ॥
जित्ते हयंद गयंदन वाले। ते सब रेती के पथ चाले॥
लियौ तोपखानौ करि हल्ला। अरब सराय मचाई अल्ला।
इतनौ देखि वजीर सिहानौ। फिर डेरन कूँ कियौ पयानौ॥३॥

मालती—

अहमद साहि सुनै अकुलाहि रह्यौ दग चाहि कछू न बसाहि।
सबै उमराइ लए सुबुलाइ कह्यौ समुझाइ करौ सुउपाइ।
गजद्दियखान तबै ढिग आन करो जुसलाम भख्यौ जहँ आम।
कहौ अब रास जुहै मुझ पास सुहाजर हाल खुजानहु माल॥४॥

दो०—जान माल सै साहि का फिदवी हाजर हाल।
रजा होइ सुगुलाम कौं मनसूरा क्या माल॥५॥

कुंडलिया—अरजी बकसी की सुनत साहि अहमद साहि।
पोता मलिक निजाम कौं कियौ वजीर सराहि॥
कियौ वजीर सराहि और यह मतौ उपायौ।
समसामुदौलाहि मीर बकसी ठहरायौ

ठहरायौ सब दैन तोपखानौ रन गरजी।
सुनी अहमदसाहि गाजीदखाँ की अरजी ॥६॥

दो०—निकट अहमद साहि के रह्यौ गाजदीखान।
बकसी तैं जु वजीर भौ जुद्ध हेत बलवान ॥७॥

लीलावती—

पुनि श्री सुजान अरुसिंह जवाहर करि सिलाह धरि आह बढ़े।
लै मसलति अकबर अदल वजीरसिंह सहर पुराने जाइ चढ़े ॥
है दल सब संग अग्ग धरि पैदल तिनहि वीर यह हुकुम कियौ ॥
अब लेइ ईंट करि देउ ईंट सौं दिल्ली सहर हम तुमहिं दियौ ॥८॥

छप्पय—जब सुजान नर कहिय तनय जाहर सु जवाहर।
तब सुनि सब अजबीर हरखि हुँकिय ज्यौं नाहर ॥
करिय हल्ल बहु मल्ल रल्ल पुर मद्धि मचाइय।
कहत देव हरि देव देव-पति की जु दुहाइय ॥
चहुँ ओर सोर अति घोर हुव तोरि फोरि भवतनु भरिय।
दिल्ली दरिआव बहु अब जुत सूरज-दल दलदल करिय ॥९॥

कवित्त—लाल दरवाजे पर सूरज सुभट गाजे
ताजे ताजे वीर हत्थ आयुध दराजे हैं।
भाजे पुर लोगन कपाट दरवाजे दीने
ऊरध भुसंडिनु कैं उद्धत अवाजे हैं ॥
कहूँ सर बाजे छर बाजे लमछर बाजे
बाजे बाजे भाठिनु सौं भोरे सिर साजे हैं।

जग के लराजे उमराज लहि छाजे ओट
केत लोट पोट मिले आजे पर आजे हैं ॥१०॥
महल सराय सैखाने बुआ बूबू करौ
मुझै अपसोच बड़ा बड़ी बीबी जानी का ।
आलम में मालुम चकत्ता का यारों
जिसका हवाल है तनैया जैसा तानी का ॥
खने खाने बीच सैं अमाने लोग जाने लगे
आफत ही जानो हुआ ओज दहकानी का ।
रब की रजा है हमैं सहना बजा है वक्त
हिन्दू का गजा है आया ओर तुरकानी का ॥११॥

पद्धरी—

यों पर्यो सोर दिल्ली अपार । पुर लोग पुकारत बार बार ॥
ब्रजवीर हँकारत डार डार । फटकार खग्ग सेलनु उसार ॥
कलबल गलीनु खलभल बजार । छलबल संभार भज्जत अगार ॥
इक तजुत आयुध छोर छोर । इक लज्जत आनन मोर मोर ॥
इक कहत धिक अहम्मद साहि । नहिं देखतु या पुर की दसाहि ॥
जिहिं जियत इन्द्रपुर यौं कुहंत । गज बाज बृषभा लुटंत ॥१२॥
दो०—देस देस तजि लच्छिमी दिल्ली कियौ निवास ।
अति अधर्म लखि लूट मिस चली करन ब्रजवास ॥१३॥
कवित्त—धर्म-सुत-धाम जान जमुना निकट मान
सर्वमेद जज्ञ कौ बनायौ ज्यौंत पूर है ।
पत्र फल फूल सब औषध समूल रस
पट अनतूल धात धान धन भूर है ॥

अंडज जरायुज औ स्वेदज उद्भिज हव्य
करयौ पूरनाहुति चकत्ता कुल मूर है।
ओज की अगिन इन्द्रपुर सों अगिनकुंड
होता श्री सुजान जजमान मनसूर है ॥१५॥

दुपई—

कलिकी आदि क्रूर मघवाने वृज पै कोपु जतायौ है।
वही अकस धरि श्री व्रजेस-सुत इन्द्र-पुरहिं लुटवायौ है ॥१६॥

इति द्वितीय अंक।

त्रिभंगी—

व्रजवासी सगरे करि करिदगरे दिल्ली बगरे लूटि करैं।
मनसूर विचारै अब को रारै याहि सँभारै संक भरैं॥
सूरजहिं बुलायौ कहि सबुझायौ सो दलु हायौ समुहायौ।
अब लूटहिं थंभौ जगहि रंभौ करयौ अचंभौ मन भायौ ॥१॥

दो०—मनभायौ ह्वै है सचै सूरज कही नवाब।
अब मैं लूटहिं वंद करि लैहों जंग सिताव ॥२॥

अनुगीत—यौं कहि सिताव सुजान उट्टिय मनहुँ तुट्टिय ईस।
ढिग बोलि सिंह जवाहरै किय हुकुम बिस्वा बीस॥
अब फौज राखहु एकठी अरु करहु लूटहिं वन्द।
सुत तो बिना यह को करै नहिं आन कौ परबंद॥
यह सुनत जाहर सुत जवाहर तात हुकुम बजाइ।
तिहिं बार ह्वै असवार धाइय दई लूट मिटाइ॥

ज्यौं बायु के बस बारि बाहक मंत्र के उतपात।
त्यौं सलभ साबर के प्रयोगहिं छिनक में उड़ि जात॥
लखि ऊर्ज नाभी बदनतें है तार को विस्तार।
त्यौं श्रीजवाहर नै कियौ सब लूट कौ परिहार॥
पुनि सैन सज्जिय पटह बज्जिय गज गरज्जि हयंद।
यौं सुनत ही मनसूर चढ्डिय दैन दिल्लिय दंड॥३॥

सारंग—

छायौ महाधूम धूली घटाघोर। उट्ठैं जहाँ रंजकैं बिज्जु सी जोर॥
पज्जै घनी तोप गज्जैं निरद्धार। देखैं दुहूँ सैन के जात आकार॥
धुंधी धरा धूसली धूम गुब्बार। मानौ मलैकाल कौ घोर अँधियार
ओलानु के भेस गोलानु के मेह। फोरै घनै मुंड टोरैं कहूँ देह॥
बौछारि गालीनु की चारिहूँ ओर। बानौन की घोर मानौ उड़े मोर
लुट्टैं कहूँ बाजि फुट्टैं कहूँ भाल। गोलानु की गेंद खेलैं मनौकाल।४

दो०—सेल साँग समसेर सर गहै भुसुंड्डो हत्थ।
मसकि मसकि बानीनु कौं हल्ल करी इक सत्थ॥५॥

कवित्तः—श्रोनित अरघ ढारि लुत्थि जुत्थि पाँवड़े दे
दारू-धूम धूप दीप रंजक की ज्वालिका।
चरबी कौ चंदन पुहुप पल टूकनु के
अच्छत अखंड गोला गोलिनु की चालिका॥
नैवेद नीको साहि सहित दिली कौ दल
कामना बिचारी मनसूर पन-पालिका।

कोटरा के निकट विकट जंग जोरि सूजा
भली विधि पूजा कै प्रसन्न कीनी कालिका ॥६॥
तूरा तैं तरेर दै दरेरनु सौं दिल्ली दावि
प्रबल पठान ना उड़ायौ पौन पत्ता सौ।
कूरम रठौर हाड़ा खीची औ पँवार राना
वाना डारि छूटे बाँधि कीनौ एक वत्ता सौ॥
सूदन सपूत समिवंस अवतंस वीर
ताही दिल्लीपति कौं लपेटि राख्यौ गत्ता सौ॥
जाहर जगत्ता है जवाहर प्रताप तत्ता
जाके कर कत्ता सौं कत्ता जारयौ लत्ता सौ॥७॥

दो०—प्रबल अरावौ साहि कौ विकट सहर पुठवार॥
वृथा जुद्ध करिबौ यहाँ होत सुभट संहार॥८॥
यौं समुझाइ सुजानन आइ जवाहर पास।
घरी चारि दिन के रहत डेरनु कियौ निवास॥९॥
जे सच्छत आए सुभट तिनकौ कियौ उपाय।
जिन पायौ पचत्तु कौं ते जमुना पहुँचाय॥१०॥

इति तृतीय अंक।

मथान

सूजारु मंसूर भेले भए सूर। वाल्यौ भरें ताप मंसूर यौं आप।
मेरा तुही अव्व कै दूसरा रव्व कीना जुतैं काम पाया-बड़ा नाम
लीनी घनी जंग दिल्ली करी दङ। लूटा इता ... रोम

है तोप की ओट टूटा नहीं कोट हैगी मुझै चोट कीया जिन्हैं खोट
लीयै तुझे जोट मारौं दिल्ली कोट करना कछू तोहि सो भापियै मोहि
मंसूर के बैन सूजा सुने ऐन कीनौ यही तंत दीनौ तबै मंत।
रेती तजौ आपु औंट्यौ घनौ तापु लीजै अबै झील कीजै नहीं ढील

दो०—इतमैं लूटि चुके दिली उतमें रही अदग्ग।
हाँ वे बाहर आइहैं तबही बाजै खग्ग ॥२॥

छंद—सूरज सो सब मानी। कूँच करायौ देर न लायौ।
दुंदुभि डंके देत असंके। ढोल्ल दमामैं भाजत आमैं॥
गोमुख गज्जै तूर गरज्जै। हत्थिय घोरैं पैदल थोरैं।
उच्च पताका वार न ताका। यौं दल उल्यौ ज्यों घन तुल्यौ
देत हरेरैं झीलहिं नेरैं। डेरनु दंकै चौकस कैकैं।
फेरि उमाह्यौ जुद्धहिं चाह्यौ। सूरज बंका देत अतंका ॥३॥

गीतिका

इहि छे उपायू दिलीस सैनहिं जात वार मलग्गहीं।
गज वाजि पैदल छोड़िकैं थल-जुद्ध तैं भल भग्गहीं॥
पुनि आइ सूरज के सुभट्टनु दिक्खि गोकुल राम कौं।
रन-भूमि तैं धरि लै चले गन पाइ दुःख उदाम कौं ॥४॥

उल्लाला—यह खबर गाजदीखान पैं साहि जहानाबाद हुव।
मनसूर सहित सूरजवली उलटि गए तिलपत्ति धुव ॥५॥

नीसानी:—पोता मलिक निजाम दा सुनि एही गल्लाँ।
हुकुम माँगिया साहिसैं हुण अग्गें चल्लाँ॥
फरमाया पति साहि भी अच्छी दिल जोई।

अग्ग अरावा ले चढ़ौ हरवल करि कोई ॥
करि सलाम रुखसद हुआ गाजुद्दीं आया ।
संग पठान रुहेल लै पुर ही तट छाया ॥६॥

दो०:—निरपि रुहेले की चमू श्री सुजान मे क्रुद्ध ।
दुष्ट दिष्ट आए भलैं कह्यौ चाहि चित जुद्ध ॥७॥
देव देव हरिदेव की जाइ दुहाई लच्छ ।
जो विपच्छ नहिं तच्छ है गच्छन सच्छत अच्छ ॥८॥

त्रिभंगी

सुनि सूरज बांनी रिस लपटानी धरनि सिहानी भूख भरी ।
पलके आहारी ललके भारी अंबर चारी भीर करी ॥
गिरि धूरि जटी के जुद्ध जुटी के मद्ध कुटी के रौर परी ।
मारू सुर लीना आवज बीना नृत्यहिं कीना तेह घरी ॥९॥

दो०:—नेह घरी असिकर करी सूरज परगन चाहि ।
कही सूर सेनाधिपनु सत्रु न जीवत जाहि ॥१०॥

नीसानी:—मारु मारु मुख अक्खदे दे दे हक्कारे ।
सेख रुहेले भागिये छुट्टा छक्कारे ॥
गिरते पड़ते धत्तिये करि कत्ते कत्ते ।
सूरज सूर पुकार दे सूरज दी फत्ते ॥११॥

कवित्त:—हेला देत आये वगमेला ज्यौं रुहेला वीर,
गैंदा गढ़ी के तीर सुभट महारथी ।
तेई काटि डारे रुंड मुंड झुंड ढारे दै,
चमुंडन अहारे भौ प्रसंग जुद्ध पारथी ॥

रुधिर के थारे परे बीच असरारे पारे,
रविजा-मिलाप कौं सुरेस भयौ सारथी।
सूदन सुजानसिंह बिक्रम-निधान महि
जान वान-गंगा कौं करी क्वान भारथी ॥१२॥

मालिनी—सुभट सिमिटि आए। सूर के पास धाए॥
हरषनु हिय छाए। जंग की जैति पाए ॥१३॥
धन धन रव लाए। कंठ सौं लै लगाए।
समर-श्रम मिटाए। मान सनमान पाए ॥१४॥

इति चतुर्थ अंक

सादरा— दिन वीत दस वीस पुनि धारि मन रीस।
सजि सैन भय दैन चढ़ि नन्द ब्रज-ईस॥
लिय साहि तुकलान गढ़ भूमि बलवान।
जहँ कालिका थान रन देखि मरदान ॥११॥

निशि पालिका—

..र दल देखि उत साहि दल सज्जियौ।
वाजि गजराज साजि तूर बहु वज्जियौ।
केतु फहरान घहरान घन दुदुंभी।
सहस्र खहरान ठहरान चक चुंधुभी॥
वान किरवान तन-भान धरि कढ्ढिये।
जान भरि सान मरदान वहु वढ्ढिये॥
दोइ असवार तिहि वार इक ओर तैं।
गोल करि गोल वहु मोल हय सोरतैं ॥२॥

रुचिरा—

साहि-अनीक त्रिलोकि वदन सुत। चरहिं बुलाइ कह्यौ तबहीं।
है इनमें को को सेनापति कुहू दूत। दुहूँ कर जोरि कही ॥३॥

पाद कुलक—

ए जँह स्याम निसानतु वारे। ते पठान ठाढ़े रन रारे॥
है जित ध्वजा नील सित चण्डी। से रुहेल की सैन घुमंडी॥
जहाँ भगोहो उड़े पताका। तहाँ दक्खिनी जंग चलाका॥
लाल सेत जह ए धुज ठाढ़ी। यहै सैन वकसी की गाढ़ी॥
जहाँ सेल साँगे बहु भाले। से अवरी रिसाले वाले॥
आस पास इनके भय दानै। रुप्यै तोपखानै समसानै॥
सब की पुट्टि छाइ दल चण्डौ। दे रन दाखिल है वलवंडौ॥
नाम गाजदीखाँ वल वंडौ। बिक्रम-वलित बुद्धि परचंडौ॥
श्रीसुजान, सुनिकैं चरवानी। जुद्ध-बुद्धि निहचै मन ठानी॥
अपने सेनापती बुलाए। जग हेत आगैं रुपवाए॥४॥

दो०—वासर के तीजे पहर साहि सुभट करि रल्ल।
जुटे आइ स्यों सिंह सह लै मरहट्ट भुज मल्ल॥५॥

पद्धरी—

स्यौसिंह भयौ सो सिंह रूप। हनि साहि सुभट मृग से अनूप॥
हुव लाल लाल वसुधा कराल। स्रौनित्त जाल ज्यौंह कोह ज्वाल॥
जहँ सेल सांग समसेर ढाल। बदूक वान जंजाल जाल॥
गहि गहि सुजान भट चंड चाल। दिय घोर मार दिय लोह झाल॥
मुख मारु मारु कै करत सार। विकरार भगे दखिनी अपार॥
रव विजय पाइ स्यौंसिंह वीर। घाइल सुमार फर रुपिय धीर॥६॥

त्रिभंगी —

भरि बथ्थनि पटके दै दै झटके हयतैं पटके श्रौन झरे।
अस्तिनु के चटके टापनु बटके अंतनि अटके जाइ परे॥
केते घट घटके आयुध कटके केले सटके संक भरे।
तिहिं सूरज वंका दै रन हक्का करि अरि फंका दूरि करे॥७॥

दो०—कटे फटे निवटे हटे लखे साहि दल जंग।
फते पाइ सूरज बली लख्यौ सुप्रोहित ंग ॥८॥

कवित्त—द्रोन अचवाई द्रोनी क्रप अँचवाई ख्वाई
सोई तैं जगाइकैं बुझाई प्यास चंडी की।
ताही खेत प्रेतनु पलाकैं भट पीठिनु के
मुंडनु के बाट हाट आमिष उदंडी की॥
सूदन दिलीस दल चाहिकैं समर गाहि
साहि की प्रतापानल खग्ग जल ठंडी की।
लागिक भुसुंडी जोभ जाव जुग खंडी तऊ
छंडी है न जंग मंडी किति यों घमंडी की॥९॥

पाई गननाइक सौं तैंई गननाइकता
त्योंहीं दिगपाल दिगपालता प्रतीति की।
तेज पायौ रवि तैं मजेज सतम० पास
अवनी कौ भोगिवौ अधिक नाथ नीति की॥
सीलताई ससि तें पवित्रताई पावक तैं
लाज पाई सिन्धुतैं सुनीति वेद रीति की।
सूदन अभीत सर्वज्ञता सुवुद्धि सूजा
दीनी जगदीस विधि ताही जंग जीति की॥१०॥

समानिका—बीति गे कछू दिना। जंग के किए बिना ॥
एक द्योस भोरहीं। दै निसान घोरहीं ॥
ह्वै सवार तथ्थ ही। लै अमीर सथ्थ ही ॥
सो वजीर आइयौ। मंत्र कौ उपाइयौ ॥
श्रीसुजान के पास कौं। कूच के प्रकास कौं ॥
थापि मन्त्र ता धरो। कूच की हियैं धरी ॥
तथ्थ ही पयान कै। इति भीति मान कै ॥११॥

दो०—हुकुम गाजदी खान कौ सब अमीर धरि सीस।
बड़ौ अरावौ अग्ग धरि हय सहस्र चढ़ि बीस ॥१२॥
साह जहानाबाद तैं द्वै जोजन भुव बढ़्ढि।
सब डेरनु चौकस करिय फेरि जुद्ध कौं चढ़्ढि ॥१३॥

कवित्त:—एक दस सौक मैं न सहस अपुत बीच।
लच्छ दस कोटि मैं न काहू नर दम है ॥
साहस सगृह सूर वीरन कौ साहीदार।
सनमुख धायौ कहा कलिहू में कम है ॥
सूदन समर साहि सैन तृन तूल बानी।
हनी देह गोलिन न खाई खेत खम है ॥
तन मन पन रन ऐसै मुहकम होइ।
जैसो वैरी साल सुत जूझ्यौ मुहकम है ॥१४॥

सो०—यह सुनि सिंह सुजान निरखि साँझ मन मौन गहि।
सहित वजीर अमान दाखिल निज डेरनु भए ॥१५॥

इति पंचम अंक।

त्रिभंगी—

भरि वथ्थनि पटके दै दै झटके हयतैं पटके श्रौन झरे।
अस्तिनु के चटके टापनु वटके अंतनि अटके जुइ परे॥
केते घट घटके आयुध कटके केते सटके संक भरे।
तिहिं सूरज वंका दै रन हक्का करि अरि फंका दूरि करे॥७॥

दो०—कटे फटे निवटे हटे लखे साहि दल जंग।
फते पाइ सूरज वली लख्यौ सुभोहित ग ८॥

कवित्त—द्रोन अथवाई द्रोनी क्रप अँचवाई खवाई
सोई तैं जगाइकैं बुझाई प्यास चंडी की।
ताही खेत प्रेतनु पलाकैं भट पीठिनु के
मुंडनु के वाट हाट आमिष उदंडी की॥
सूदन दिलीस दल चाहिकैं समर गाहि
साहि की प्रतापानल खग्ग जल ठंडी की।
लागिक भुसुंडी जोभ जाव जुग खंडी तऊ
छडी है न जंग मंडी कित्ति यों घमंडी की॥
पाई गननाइक सौं तैंई गननाइकता
त्योंहीं दिगपाल दिगपालता प्रतीति की।
तेज पायौ रवि तैं मजेज सतमए पास
अवनी कौ भोगिवौ अधिक नाथ नीति की॥
सीलताई ससि तैं पवित्रताई पावक तैं
लाज पाई सिन्धुतैं सुनीति वेद रीति की।
सूदन अभीत सर्वज्ञता सुबुद्धि सूजा
दीनी जगदीस विधि ताही जंग जीति की॥१०॥

समानिका—वीति गे कछू दिना। जंग के किए विना॥
एक द्योस भोरहीं। दै निसान घोरहीं॥
ह्वै सवार तथ्थ ही। लै अमीर सथ्थ ही॥
सो वजीर आइयौ। मंत्र कौ उपाइयौ॥
श्रीसुजान के पास कौं। कूच के प्रकास कौं॥
थापि मन्त्र ता धरी। कूच की हियैं धरी॥
तब्ब ही पयान कै। इति भीति मान कै॥११॥

दो०—हुकुम गाजदी खान कौ सव अमीर धरि सीस।
वड़ौ अरावौ अग्ग धरि हय सहस्र चढ़ि वीस॥१२॥
साह जहानावाद तैं द्वै जोजन भुव वढ्ढि।
सव डेरनु चौकस करिय फेरि जुद्ध कौं चढ्ढि॥१३॥

कवित्त:—एक दस सौक मैं न सहस अपुत वीच।
लच्छ दस कोटि मैं न काहू नर दम है॥
साहस सगूह सूर वीरन कौ साहीदार।
सनमुख धायौ कहा कल्हिू में कम है॥
सूदन समर साहि सैन तृन तूल वानी।
हनी देह गोलिन न खाई खेत खम है॥
तन मन पन रन ऐसै मुहकम होइ।
जैसो वैरी साल सुत जूझ्यौ मुहकम है॥१४॥

सो०—यह सुनि सिंह सुजान निरखि साँझ मन मौन गहि।
सहित वजीर अमान दाखिल निज डेरनु भए॥१५॥

इति पंचम अंक।

पावकुलक—पुनि गाजदीं खान चितियौ चित्त मैं।
माधौसिंह बुलाइ करौं निज हित्त मैं ॥
आपा और मलार वेगि बुलवाइयै।
आपुन हो पुठवार इन्हैं उरझाइयै ॥१॥
हस्त रोज के वीच दस्त करि आवना।
दस्त आपके पस्त हरीफ करावना ॥
यौं फरमान लिखाइ डाक चलवाइ कै।
माधौसिंहहिं पास दयौ पठवाइ कै ॥२॥

दो०—फेरि दक्खिनिनु कौं लिख्यौं आपु गाजदींखान।
सूरज और मनसूर मिलि किया तरत कलकान ॥४॥
अवधि आगरा माहिनै तुमकौं दिया बताइ।
नगद खर्च जो फौज का चामिल लेना आइ ॥४॥

सुमुखी—

पुनि दल सज्जिय घोरधनौ। पटह गरज्जिय मेघ मनौ ॥
फहरत हैं सित स्यामभुजा। अरुन हरीत सुनील दुजा ॥
चढ़त चमू चतुरंग महा। उडि रज अंबर भान गहा ॥
सहित अरावहिं कूँच कियौ। तबहिं फरीदहि बाद लियौ।

मोदक—

नूरजहू अपने चित सोचत। जंग बिना चित सोचन मोच
माधव औ दक्खिनी दल आवहिं। तौ इन सौं नहिं जंग रचा
जो लग ये नहिं आवन पावत। तौ लौं साहस एक उपाव
एक कपट्ट करौं पितु संकहि। लै मनसूर हजूर सुबंको

तोपनु छोट करैं बहु चोटनु । ते असि साँग हनो अरि मोटनु ॥
यौं निहचै करिकैं अपने मन । बोलि नबाब करयौ सकी पन ॥
बैतवै—सजे सब सैन कौं यारौ तहाँ मनसूर आया है ।
कहौ क्या है बहादुर दिल सुजानै यौं सुनाया है ॥
नहीं बदनेक कौं जानौं मुझे तौ दरत साया है ।
भला जो होय सो करना खुदा ने तो बताया है ॥
तबै मनसूर सौं सूजा दुहूँ कर जोरिकैं भाखी ।
हुकुम जो आपको पाऊँ सही करि जंग मैं राखी ॥७॥
तोमर—तबही सुजान अमान । उठि जुद्ध कौं बलवान ॥
किय बाम ओर वजीर । तिहि संग सैन गभीर ॥
पठयौ सुदच्छिन ओर । करि सदाराम सजोर ॥
बहु और सूर समूह । रन-काज चढ्ढिय जूह ॥८॥
कवित्त—भूतनु सहित भूतनाथ मजबूत भए
पूतनु जगायौ सुनि चंडिका अवास मैं ।
चरची चरैयनु कैं चरची रह्यौ न कोई
घरबी भरघरबी घुमानै भूख प्यास मैं ॥
बीर बाम बिहँसि बिहँसि कैं बिमान चढ़ीं
हरि मन हरपि बजायौ बीन हास मैं ।
जा समै समर काज पास मैं सुनायौ सूर
वा समैं अनंत मोद बाढ्यौ भू अकास मैं ॥
पद्धरी—
जब्बै सुजान किन्नौ पयान । सब्बै सुभट्ट दै दै निसान ॥
ज्यौं भीम भीम भारथ रिसान । तुरकान कौरवन करन घान ॥

प्रथम गाजदींखाँ मिल्यौ पुनि मनसूर सुजान ।
मधुकर ने समुझाइकैं मनौ संधि कौ ठान ॥१६॥
तुम हम सेवक साहि के हुकुम बजावन हार ।
आपुस के अहँकार सों होतु दिल्ली-संहार ॥१७॥
यौं कहिकैं आमेरपति सबकौं दियौ मिलाइ ।
साहि अहम्मद सौं दुहूँ दीने विदा कराइ ॥१८॥
चल्यौ अवध के मुलक कौं दर कूचन मनसूर ।
सूरजहू को संग लै व्रज कों चले जरूर ॥१९॥

पवंगा—सिंह जवाहर संग चल्यौ कमठेसहू ।
आए कामाँ तहाँ मिले बदनेसहूँ ॥
लै आए पुर दीघ कियौ सनमान हैं ।
मधुकर नेह जताइ गयो निज थान हैं ॥२०॥

इति श्रीमन्महाराज कुमार जदुकुलावतंस श्री सुजानसिंह हेतवे कवि सूदन विरचिते सुजान चरित्रे दिल्ली विध्वंसनो नाम षष्टमो जंग सम्पूर्णम ॥

दो०—द्वारह से सुद सातरा हिम रितु महिना पोष ।
दच्छिन-दल दिल्ली-दलनु कीनो व्रज पै कोप ॥१॥
करि मिलाप बदनेस सौं कूरमसिंह सुजान ।
देखि भर्थपुर देव को बहुर्यो कियो पयान ॥२॥

करो—

चलत कह्यो मधुकर भूपाल । दखिनी आवतु तुम पै हाल ॥
जो तुम करौ आपनो संध । तो हम ताकौं करैं प्रबन्ध ॥

तब सुजान मधुकर सौं कही । हमें आपु करिहौ सो सही ॥
जो कछु पहल मामलति भई । सो महाराज सबै सुनि लई ॥
वा माफिक वे मानैं आज । नाहीं तौ नाहीं महराज ॥
ये बातै कूरम धरि कान । कीनौ अपने देस पयान ॥
तबही रूपराम बुलबाइ । सोहू सब विधि पूरन आइ ॥
रूपराम सों कही सुजान । दखिनिनु पास करो तुम जान ॥
तिनकै दलकौ सबै सुमारु । और जो उनके मन को सारु ॥
वे जो कहें सु धरिकैं कान । कीजौ ब्वाब महाबलवान ॥३॥

मनोरमा—

बीते कछू चौसही में जहाँ । आधी निसा डाँक आयौ तहाँ ॥
दीने समाचार ताही घरी । मार्यौ द[illegible] दै बलू चौधरी ॥४॥

सो०—सो सुनि सिंह सुजान तुरत बोलि बलिराम कौं ।
कह्यौ दीघकौं जान लाला सौं जाहिर करौ ॥५॥
कहनी यहै सिताब सबै बरूथनि साजिकैं ।
बरसाने कौं जाब मदति आगैं भेजियौ ॥६॥
ह्वै सवार बलिराम आयौ दीरघ नगर कौं ।
जो कछु करनौ काम कह्यौ जवाहर सिंह सौं ॥७॥

दुपई—चलत चलत दखिनी बढ़ि आए जैपुर डेरा दीने ।
प्रथम भूप कूरम सौं करे ब्वाब स्वाल ए कीने ॥
द्वादस लाख रुपैया दै कैं पुनि माधव नृप भाषी ।
हर गोविंद होइ तुम सामिल जौ ब्रज कौ अभिलाषी ॥
ये सब समाचार जैपुर तैं माधव औ दखिनी के ।

रूपराम लिखियौ ब्रज-भूपै साठ हजार अनी के ॥
और लिख्यौ सबकैं ए दखिनी तुम सौं जंगहि जोरैं ।
आपुन सावधान ह्वै रहियौ देस दुंद की ओरैं ॥८॥

दो०—जैपुर सौं फरचौ कह्यौ आपा औ मल्लार ।
रूपराम बुलवाइकैं पूछ्यौ कहा विचार ॥९॥

सो०—पुनि बोल्यौ मल्लार दो करार यहाँ देउगे ।
मैं अब होत सवार रूपराम तुव देस पैं ॥१०॥

दो०—अब कैं सूरजमल्ल नै लूटी दिल्ली खूब ।
दो करोर क्या बहुत है लिखि भेजै किनि तूब ॥११॥

सुगीतिका—तब दै असीस दुहून कौं द्विज राम परम प्रवीन ।
सुनिए जुबाब मलार के सब बोलियो मृदु पीन ॥
बड़ भाग हैं तुम सैन के ब्रज देखि हैं भरि नैन ।
कछु लैन की बिधि ना बनै तहँ दैन कौ कछु मैन ॥
तुम सिंह श्री बदनेस सौं किय लैन दोइ करोर ।
यह बात मोहि न सूझ ही यह देइगो अनरोर ॥
सत कोटि है उहि भौन मैं गज बाजि ओर न छोर ।
इस पातसाही लूटिकैं दरबार ओढ़त खोर ॥
यह तासु कौ निज टेउ जानत सो बखानत राउ ।
इमि दाम हू नहिं देइगो उठि खर्च कोटिक जाउ ॥
तुम तासु पै जुग कोटि चाहत सोहि है नु अंदेस ।
मिलिहैं जु नाहिं सिमार सौं अब कैं मिटै न कलेस ॥१२

दो०—उत इत के परताप हैं चारि लाख मो पास।
आपु लेउ सब कुसल सों मोहिं दुहुन की आस ॥१३॥
रूपराम के वचन कान धरि यह बोल्यौ मल्लार।
खंडी लै प्रोहित के घर तें बाढ़ै कुजस अपार ॥१४॥

ललित पद—

कोटि किलौ खाई घन भाई जल बल जोर सु कहिये।
सो कितेक ब्रजराज-बदन कैं सो सब साँची लहिये ॥१५॥

भुजगी—

तबै रूप ने बात साँची उचारी। ब्रजाधीस के ठाठ को बान भारी।
असीचारि के कोस कौ कोट बाँकौ। किलेदार है साँवरो चारि घाँको।
इतै बान गंगा उतै भानु जाई। विधाता बनाई चुहूँ ओर खाई ॥
हवेली किलेदार की कोस नौंको। कलिंदी सुनीरैं प्रलै केन औको ॥१६

दाव—रूपराम आपा मलार कौं गिरवर सनौ सुनायौ।
झूठ नहीं यह साखि भागवत आप व्यास मुनि गायौ ॥
ता कुल में बदनेस भूप है तुम सुरपति-पद पायौ।
कलि की मद्धि स्याम जू ने फिर वही बनाउ बनायौ ॥१७

दो०—दच्छिन दिस गिरि-पूछ है उत्तर दिस मुख नैन।
तहाँ सरोवर द्वै सरस राधाकृष्ण सुऐन ॥१८॥

छप्पय—इन्द्र इटायैं सहर अग्नि गोपाचल दुग्गहिं।
दच्छिन पुरी कल्यान नैरितिहिं नीमरान महि ॥
वरुन हस्थाने सीम मरुत दिस गढ़ मुकतेसुर ॥

उत्तर दिग गढ़ राम ईस सहपऊ परैं धर ॥
इतनीक भूमि वसुदेव सुत बदनसिंह भूपहिं दई ।
तुरकान तेज परिहरि सकल आन पीतपट की भई ॥१९॥

दो०—तुम तारे नृप जे भरनि ते पारे ब्रजराज ।
दस हजार भट आपसों चाहत समर समाज ॥२०॥
चारि लाख बदनेस कैं हैदल पैदल त्यार ।
किलेदार गिरवर-धरन ताकी सैन अपार ॥२१॥
कोट किलौ परिखा सुभट भाई श्रीय समाज ।
मंत्री सिंह सुजान-सुत ब्रजपति को जुवराज ॥२२॥
ताहि तुम्हैं पर भूमि मैं बजी तेग कै बार ।
कहा कहौं सो आपुही जानत राउ मलार ॥२३॥

इति प्रथम अंक ।

दो०—रूपराम के वचन सुनि बोल्यो राउ मलार ।
सत्ति सति तैंने कह्यौ ब्रजपति कौ ब्यौहार ॥१॥
जो धरनी बरनी जुतैं रूपराम सविलास ।
ताहि देखि हैं नैन सौं सब दक्खिन तो पास ॥२॥
कछू उमाह्यौ हो हमैं कछू बुलाए साहि ।
बढ़गूजर को मारिबौ सुनि आए भुव गाहि ॥३॥

कवित्त—गुज्ज भुज्ज द्रविड़ तिलंग बंग गौढ़ गढ़ा ।
मंडला उड़ीसा लै बघेल औ बुंदेलखंड ॥
झार खंड मगध मलार गंगा पार डाँग
ऊमट उचार मालुया मैं न राख्यौ चंड ॥

हड़ौती ढुँढाहर भदावरि दिलीपति के
सहित उजीर उमराई राय पाए दंड।
सेवा संभा साऊ राम राजा के जलेवदार
एक ब्रजदेस वदनेस ही रह्यौ अदंड ॥४॥

संयुता—

पुनि यौं कह्यो सु मलारनै। थल वै सवै सु निहारनै॥
यह मैं कहौं निज टेक कैं। ब्रज-भूमि दक्खिन एक कैं॥
तब दो करोरहिं लेहिंगे। ब्रजराज दाम न देहिंगे।
पटपीत की उन ओट है। इत आपु संकर जोट है॥
तब मामलति ह्वै जायगी। जुरि जंग कै ठहराइगी॥
यह भाषि राउ मलार ने। पुनि बोलि आप कुँवार ने॥
ढिंग देखि खंडू सौं कही। अव कूच ही करनौ सही॥
सजि आपुनी सब वाहिनी। धर मेव की अवगाहिनी॥
वहु द्यौस कौ नहिं काम है। ब्रजभूमि फेरि मुकाम है॥
धरि सीस आयसु वाप कौं। दल साजि खंडू आपकौं॥
असवार चार हजार सौं। किय कूच संग वहार सौं॥
अति दीह डंकनु देत भौ। भुव मेव की पथ लेतु भौ॥५॥

चपला—आवै है खंडू मैवातैं। रूपा ने भेजी ये वातैं॥
मल्लारै आयो ही जानौ। ढीलै ना कीजौ जो ठानौ॥६॥

दो०—आयौ राउ मलार-सुत सुनि सुजान को नंद।
जुद्ध-काज उद्धत भयो अंग अंग आनन्द॥७॥

यह सुनिकैं सूरजबली उतमैं राउ मलार।
दोउन के चिन्ता बढ़ी जाने पूत जुझार ॥८॥

छप्पय—दोऊ उमरि अराक दुहुन उनमाद रारि हित।
दोऊ जानत जीति, हारि जानत न दुहूँ चित ॥
नहीं जीति सौं जीति हारि सौं होत हारि ही।
दोऊ निज निज सुतनु लिख्यौ जलदी विचारिही ॥
खंडू न जंग मो बिन रचहु सपथ लिखी मल्लार ने
ह्याँ निसाँ करतु ब्रजराज की रूपराम इहि कारनै ।

पवंगा—तवै जवाहर सिंह दीघ मैं आइयौ।
उततैं सिंह सुजान ब्रजेस बुलाइयौ ॥
ज्यौं असुरन के हतन जतन हित देवता।
मतौ करैं जगदीस ईस विधि सेवता ॥१०॥

कवित्त—दीघ में दीरघ सभा कै चारि डूँगनु की
बैठ्यौ ब्रजराज बदनेस महाराज है।
पूरन पुरुष परिपूरन विराजै साज
सूरत कौ मंडल अखंडित दराज है ॥
सनमुख सूरज जवाहर लसत दोउ।
मानौ गुन तीन देहधारी को समाज है।
कैधों सिवलोचन निगम दुख मोचन कौं,
कैंधो तीन देवता विचारैं सुरकाज है ॥११

छप्पय - पुनि महाराजधिराज चित्त वदनेस विचारिय।
मोदन मोदी बोलि ताहि निज वचन उचारिय ॥

कहौ कित्ती ततबीर अन्न घृत तेल नोंन की ।
सो साँची कहि देउ और विधि करौं हौ न की ॥
यौं सुनत सुगंगाराम सुत चारि लाख नर नित कही ।
द्वै वरस लरौ मल्लार सौं खान पान मोपर सही ॥१२॥
सो सुनिकै व्रजनाथ ताहि स्याबास सुनायौ ।
फेरि दुग्ग दीवान निकट भज्जूहि बुलायौ ॥
कह्यौ वचन यह ताहि तैयारी दारू गोला ।
हाजर कहि सो मोहि तबै भज्जू यह बोला ॥
महाराज लरौ निहचिंत ह्वै बरसन लौं मल्लार सौं ।
जो जहाँ चाहियै सो जिनसि पहुँचै एक हँकार सौं ॥१३

दो०—मोदी औ दीवान की अरज सुनत महाराज ।
रहौ जवाहर के निकट यहै तुमारौ काज ॥१४॥

सो०—उततैं राउ मलार जैपुर तैं कूँचहि कियौ ।
जैसैं सलभ अपार उठै प्रजा संहार कौं ॥१५॥

कवित्त—सहस नगारे सहसनुही निसानवारे ।
सहस सहस जूथपतिन उमंड की ।
अवनि अवास देस दुग्गनु भै त्रास देत
विकट निवासन उदासत घुमंड की ॥
सूदन सरित शृङ्गी कुपथ सुपथ कीने
मानौ बारिधारिनै मृजाद बेलि खंड की ।
उद्धत उदंड की मलार आपा चंड की यौं
आई सैन घोर कलिकाल बलवंड की ॥१६।

सो०—तहाँ फेरि मल्लार रूपराम द्विज सौं कही।
तै कछु कर्यौ सुमारु या दल तैं दस गुन करौं ॥१७॥

प्रमानिका—

बड़ौ प्रतापु आपु कौ। उथाप भूमि थापु कौ॥
सवार चारि लाखहू। समेटि जंग भाखहू॥
तऊ न दुग्ग तोरिहौ। वृथा अनीक जोरिहौ॥
किलेजुदार या धरा। सुजंग जीति कौ वरा॥
छ कोटि सैन को पती। करी जु तासु की गती॥
प्रसंग कान दै सुनौ। न झूठ ता समैं गनौं॥
मलार बोलि आमजू। कहौ सुरूपराम जू॥
सुरूपराम ता घरी। करी कथा उजागरी॥१८॥

पद्धरी—

सतजुग्ग मद्धि मुचकुंद भूप। इछ्वाकु वंस उद्भव अनूप॥
तिन कियौ देवतनु कौ सहाय। करि जुद्ध दैत्य मारे अघाय॥
तब सबै देवता ह्वै-प्रसन्न। मुचकुंदहि भाषिय धन्न धन्न॥
बर माँगि भूप सो होइचित्त। तैं करे वाहुबल हम सुचित्त॥
सुनि भूप कही बर एहि देहु। चित वासुदेव सों होइ नेहु।
मैं सोयौ चाहत बहुत काल। निर्विघ्न कीजिए लखि हवाल।
जुग तीन अन्त लौं सोइ ईस। नहिं कोइ जगावै बिसै बीस॥
अस आनि जगावै जो भुवाल। तो दृष्टि पाइ पावै सुकाल॥
लखि मथुरा तैं दच्छिन दिसाहि। चामिल तरंगिनी तट सराहि।
तहँ अचल कंदरा लखि इकंत। छिति कंत वहाँ सोयौ सुखंत।१९

दो०—सो नृप सोयौ कंदरा वहुत काल गए वीत ।
या व्रज की रच्छा करन प्रगटे कृष्ण अभीत ॥२०॥
सोधि सोधि यह धरनि में मारे असुर उदंड ।
काल जमुन कावित भयो दैत्यराज परचंड ॥२१॥
दिसा आठ हू जोति कैं जुद्ध अघानौ नाहिं ।
वैठि मेरु की शिखर पै रन सोचत मन माँहि ॥२२॥
तहाँ गगन मग आइयौ मगन कलह को रूप ।
गान करत हरि के गुननु नारद भेष अनूप ॥२३॥
सो०—सुनि मुनि वोल्यौ वैन काल जमुन साँची कहौं ।
तो सम जुद्धहिं दैन मथुरा मैं श्रीकृष्ण हैं ॥२४॥

छप्पय—

काल जमुन तिहिं काल लाल लोचन कराल तन ।
अति उताल चलि चाल ढाल किरवाल धारिपन ॥
छह करोर गज वाजि जोरि मुच्छन मरोरि मुख ।
किय पयान घन के समान नीसान स्याम रूख ॥
दसहूँ दिसान खलभल परिय थल जल, जल दलदल करिय ।
वहुँ जमनकाल विकराल वल ज्यौं अवाल ज्वाला झरिय ॥२५॥

दो०—जमन-राजकौ जमन वह मथुरा आयो धाइ ॥
कालजमन को आइवौ कृष्णै दियौ सुनाय ॥२६॥
और कह्यौ जो हो कह्यौ जमन-राज रन काज ।
थने दैत्य तैंने हने काढ़ौं वैर सुभाज ॥२७॥

हरि—सुनि दूत वचन बोले। ब्रजचंद बैन खोले ॥
हम जुद्ध कौं न जानैं। नाह सस्त्र हाथ ठानैं ॥
हम कौन असुर मार्‍यौ। तुमने जु रोस धार्‍यौ ॥
जो आपु हतन आवै। तातैं दई वचावै ॥
हम नंद गोप द्वारैं। बछरा सुगाइ चारैं ॥
दधि दूध माँगि पायौ। नवनीत चोरि खायौ ॥
पर जो न जमन मानै। तौ ढीलहू न ठानै ॥
आए अतिथ्य पासैं। कैसे करौं निरासैं ॥२८॥

निगालिका—प्रभात भौ सुहात भौ। छली छलो जगे बली।
तिहीं घरी उठे हरी। न देरहू कछू करी ॥२९॥

कवित्त—ऐंठि बाँध्यौ मुकट समैटि घुँघरारे वार
कुँडल चढ़ाए कान कलगी सुघट की।
जाँघिया जकरि कैं अकरि अंग राग करि
कटि मैं लपेटी कसि पेटी पीतपट की ॥
भृगुपद-अंक ढाल सकति श्रिया कौ चिन्ह
सूदन सनाह वनमाल लाल टटकी।
कोटिन सुभट की निहारि गति सटकी
सुसुन्दर गोपाल की धरनि भेप भटकी ॥३०॥
मद भरे लोचन विसद अंग आभा चारु
लच्छ लच्छ हंस की सी सोभ अवतंस की।
ताल अंक उर पैं विसाल नील पट फैंट
सत्रु कीन संस संस संक भरि कंस की ॥

आयुध अनेक रेवती के कंत जू के तऊ
सायुध भए हैं हल मूसल प्रसंस की।
जमन के वंस को निवंस को विचारि चित
वसुदेव अंस की है लाज जदुवंस की ॥३१॥

नीसानी—सज्जि खड़े वसुदेव देव घार मदन हारे।
काल जमन तिहिं काल ही आयौ ललकारे॥
वरुन दिसा खुर खेह सों हुई घन अंधी।
स्याम निसानौं सैं छुई डंकों धुनि वंधी॥
देखि तिन्हैं श्रीकृष्णजी हलधर सैं अक्खी।
इसदे लरने दी क्रिया अस्सी दिल रक्खी॥
सुत्ता था जिस मेरु दी कंदर दे अंदर।
तिथ्थौं पैठे स्याम जी छलवली लुकंदर॥
सुत्ता लखि मुचकुंदनूँ ढकि पीतंवर।
अलख अलख ही हो गए गहि रूप धरंवर॥
उस ठाँ आया जमन भी अंवर लखि भरमा।
तद लक्खाँ वो जादवाँ सूता ज्यौं धरमा॥
जुट्टि जंग मैं भग्गना निंद्रा तुझ केही।
खेल न होवै जुज्झना सुथ्याँदी देही॥
यौं कहि कैं मुचकुंद कौं पैरों से धत्ता।
सो जग्गा दृग लाल सैं ज्यौं जवा भरत्ता॥
तिसदी चाहन सैं कढ़ी दाहनि उस वेली।
काल जमनि तिसनै किया खक्खा दी ढेली॥३२॥

हरि—सुनि दूत वचन बोले। व्रजचंद बैन खोले ॥
हम जुद्ध कौं न जानैं। नाह सस्त्र हाथ ठानैं ॥
हम कौन असुर मार्‍यौ। तुमने जु रोस धार्‍यौ ॥
जो आपु हतन आवै। तातैं दई बचावै ॥
हम नंद गोप द्वारैं। बछरा सुगाइ चारैं ॥
दधि दूध माँगि पायौ। नवनीत चोरि खायौ ॥
पर जो न जमन मानै। तौ ढीलहू न ठानै ॥
आए अतिथ्य पासैं। कैसे करौं निरासैं ॥२८॥

निगालिका—प्रभात भौ सुहात भौ। छली छलो जगे बली।
तिहीं घरी उठे हरी। न देरहू कछू करी ॥२९॥

कवित्त—ऐंठि बाँध्यौ मुकट समैटि घुँघरारे वार
कुँडल चढ़ाए कान कलगी सुघट की।
जाँघिया जकरि कैं अकरि अंग राग करि
कटि मैं लपेटी कसि पेटी पीतपट की ॥
भृगुपद-अंक ढाल सकति श्रिया कौ चिन्ह
सूदन सनाह वनमाल लाल टटकी।
कोटिन सुभट की निहारि गति सटकी
सुसुन्दर गोपाल की धरनि भेप भटकी ॥३०॥
मद भरे लोचन विसद अंग आभा चारु
लच्छ लच्छ हंस की सी सोभ अघतंस की।
लाल अंक उर पैं विसाल नील पट फैंट
सत्रु कीन संस संस संक भरि कंस की ॥

आयुध अनेक रेवती के कंत जू के तऊ
सायुध भए हैं हल मूसल प्रसंस की ।
जमन के वंस को निवंस की विचारि चित
वसुदेव अंस की है लाज जदुवंस की ॥२१॥

नीसानी—सज्जि खड़े वसुदेव देव घोर मडन हारे ।
काल जमन तिहिं काल ही आयौ ललकारे ॥
वरुन दिसा खुर खेह सों हुई घन अंधो ।
स्याम निसानौं सैं छुई डंको धुनि वंधो ॥
देखि तिन्हैं श्रीकृष्णजी हलधर सैं अक्खी ।
इसदे लरने दी क्रिया अस्सो दिल रक्खी ॥
सुत्ता था जिस मेरु दी कंदर दे अंदर ।
तिथ्थौं पैठे स्याम जी छलवली लुकंदर ॥
सुत्ता लखि मुचकुंदनूँ ढकि पीतंबर ।
अलख अलख ही हो गए गहि रूप धरंधर ॥
उस ठाँ आया जमन भी अंबर लखि भरमा ।
तद लक्खाँ वो जादवाँ सुत्ता ज्यों वरमा ॥
जुद्ध जंग मैं भग्गना निंद्रा तुक केही ।
खेल न होवै जुज्झना मुख्यांदी देही ॥
यौं कहि कैं मुचकुंद कौं पैरां सं वत्ता ।
सो जग्गा दृग लाल सैं ज्यौं जवा फरन्ना ॥
तिसदी चाहन सैं कढ़ी दाहनि उस वेली ।
काल जमनि तिसनें किया खक्खा दी ढेली ॥२२॥

दो०—दरसन लहि गोविन्द को महाभाग मुचकंद ।
करि प्रनाम लाग्यो करन अस्तुति बुद्धि बिलंद ॥३३॥

छप्पय—जै जै श्रीव्रजचंद नंदनंदन अनंद-निधि ।
सगुन सच्चिदानंद छंद बंदन सुछंद विधि ॥
बृंदारक बृंदनि बिलंद जय मंदिर दायक ।
जै बृंदावन तुलिन रचित लीला रुचि लाइक ॥
जगमगत सुजस चौदह भुवन सेवक को संकट हरन ।
जै रमानाथ जदुनाथ जै जै जै गोवर्धन धरन ॥३४॥

इति श्री सम्पूर्णम् ।

शब्द-कोश

प्रथम जंग

पृ० १ गलौ—(ग्लौ) चन्द्रमा। गुह्यपति—कुबेर। गंधवाह—पवन। अभौ—(अभय) अभीति।

पृ० २ हंस—सूर्य। रौरिया—लड़का, शिव। पंचै—पंचमसिंह। परताप—राणा प्रताप।

३ किरवान क्रवान—तलवार। गाहिकैं—अवगाहन करके। थाप—स्थापित करके। धनेस—कुबेर। नखेतस—चन्द्र। पर-उर—शत्रु के हृदय। कुरएस—पाण्डु। दिनेस'''द्द—यम। अलकेस—कुबेर, कुबेर के पुत्रों का नाम नल कूवर।

४ विरभियो—युद्ध किया। भ्रजाद—मर्यादा।

५ ठारै दुहोतरा—१८०२ दग्ग—दुर्ग। कभू—कभी। अमान (अ)—रक्षा। दुःख न देना। आरस—(आदर्श) दर्पण। गयंद—(गजेन्द्र) मस्तगज। मद्धि—मध्य में। जूथप—यूथप एक समूह का स्वामी। परसै—(स्पर्श) जिसको स्पर्श करती है।

६ दराज (फा०) बड़ा, दीर्घ। पाइक—सेवक। तुरकी''कच्छी—कवि ने घोड़ों के भेदों के नाम लिखे हैं। नौने मौने—लावण्ययुक्त तथा कोमल, अत्यन्त सुन्दर। खगराइ—खगराज, गरुड़ जिनकी चाल''' पवन। गवन की—इन दो पक्तियों में अक्रमता दोष है क्योंकि मन की गति का वर्णन करके कुरंग, खगराज और पवन की गति का वर्णन है। समद्द—समद, मद सहित। दुरद्द—द्विरद, हाथी। परद्दल—शत्रुसेना। दलद्द—नष्ट करने वाले। किंमत—कीमत, मूल्य।

७—उदभट—(उद्भट) प्रचंड। मसलति—(अ० मसलहत) अच्छी राय, सम्मति। सारति—(फा० इशारत) इशारा करना, संकेत। वीय—(द्वय) दोक। साथ—अन्य से।

८—राइरानैंनु—रायरायान अधीन राजवर्ग। फतेहूअली—फतह-अली। रुखसत—(अ०) छुट्टी, विदा। साइत—शुभ घड़ी, शुभ मुहूर्त। भुव मान—पृथ्वी का सम्मान।

९—वियौसु—द्वितीय तु-दूसरा। कौल-वचन—विश्वास दिला के। ब्यौरौ—विवरण, हाल। नकीव—(फा०) भाट, वंदीजन। बरन—वर्ण, ब्राह्मणादि। पटह—वाद्यविशेष। मदति—(फा०) मदद-सहायता। कोल—अलीगढ़ का प्राचीन नाम।

१०—कुद्ध—क्रोध। उनमान—अँदाज। दरपुस्त—(फा० दरपुश्त) कई पीढ़ी तक। मेहर—दया। सूत—मलाह, मेल। खेत—रणस्थल। अट्टटानी—अटकी, चुभी। आगा—फा० स्वामी। फजए—(अ०) प्रातःकाल। गजर—घंटा। हुतास—अग्नि।

११—इतकाद—अ० (एतक़ाद) विश्वास। गौर—(अ० ग़ौर) सोचना विचारना। कलि भारथ—भीम आन कलियुग के महाभारत का दूसरा भीम। निसान—यह शब्द इस पुस्तक में दो अर्थों में प्रयुक्त हुआ है (१) वाद्य-विशेष, (२) झण्डा। किन्तु यहाँ नगाड़े के अर्थ में है। अक्क—(अर्क) सूर्य। निनद्द—निनाद शब्द। अहद्द, विहद्द—असीम। सद्द—(सदा) शब्द।

१२—जँजाल—(अ० जजील:) हड़—छोटी तोप। जुद्ध—युद्ध, उद्ध—(ऊर्ध) ऊपर। पल-चर—मांस भक्षी। जुग्गिन—योगिनी। नागीय—नभ। रहस—(रहसि) एकान्त। थिरात—तैरते हैं। भारती—सरस्वती।

१३—समसेर—(फा० शमशेर) तलवार। छनजात—(छनज) रक्त। मुंसुडिनु—बाणों की।

१४—त्रित्तिय—बीती, प्राणों पर बनी। रित्तिय—भाग गई। त्रन—तृण, तिनका।

द्वितीय जंग

१५—गंग धरनि—शिव । सुरेस—दिल्ली नरेश ।

१६—करी - गज, जिस प्रकार भगवान् गरुड़ध्वज ने ग्राह से गज की रक्षा की थी । वरछैत—योधा । दंति—हाथी । तूर—वाद्य विशेष । दुवन—शत्रु । डिढ़ न रहे—धैर्य न रहा । हयंद—हयेन्द्र, अश्वराज ।

१७—जोतिस के जाता—ज्योतिष के जानने वाले । मघवान—इन्द्र । डढि्ढ—दग्ध हो गये । छंडिय—छोड़ दी । तच्छिन—तत्क्षण ।

१८—चित चाइ—प्रसन्न चित्त । ब्रजभाषा—'चाउ' का प्रयोग उत्सुकता संवलित प्रसन्नता के लिए होता है । नूर—(अ०) कान्ति, प्रकाश । जमडाढ़—आयुध विशेष ।

१९—अग्ग—अग्र, आगे । पग्ग—पग, पैर । मग्ग—मार्ग । खग्ग—खड्ग, तलवार । उध्थौं—उधर । इध्थौं—इधर । झुट्टक झुट्टे—समूह के समूह । श्रोन—रक्त ।

२०—द्रगि—(दृग) आँख । चमू—सेना । वरगी—(फा० बारगीर) जो सवार राज्य के घोड़े पर नौकर हो ।

२१—संधै—संधान कर धारण कर, सुसज्जित हो कर । तुंग—बड़े । सिवार—काई । सूकि—शुष्क, सूखा ।

इस छप्पय में कवि ने रणस्थली का क्षीण सरोवर से समस्त देश-वर्ती रूपक बाँधा है । रूपक का अच्छा उदाहरण है । वीभत्स रस प्रस्फुटित हुआ है ।

तट—आसपास । विरतंत—वृत्तान्त ।

२२—उछाह—उत्साह । कैऊ—कितने ही । भावतु—अच्छा लगता है ।

२३—मन वचकाइ—मनसा वाचा कायेन । परिताप—प्रताप ।

तृतीय जंग

२४—राखै—(आखु) चूहा । वसवास—निवास । अचलै—पर्वत ।

अचलै—अंचल। वेतन बाँटने वाला अफसर यह छंद हास्य रस का बड़ा उत्कृष्ट उदाहरण है। यकसी—(फा० बख्शी)। कलेसहिं—(क्लेश) युद्ध। पील—(फा०) हाथी। कढि ढय—निकल आया।

२५ निपातहिं—पतन। तरन तरणि, सूर्य। तनेने—तीव्र। तेह—तेज, प्रतपाप।

२६—भै भय। उदेग- उद्वेग, चिन्ता। कवाद - (अ० क़वायद)। नियम प्रणाम करने का युद्धीय ढंग। वेग शीघ्र। माफिक—अनुसार।

२७—कन्न कान। यहाँ पर पंजाबी का प्रयोग अधिक है। हमनूँ मैं भी। तुसी—तुझको। आवने भेद—आने का कारण। फरमाना (फा० फर्मान) राजकीय आज्ञापत्र। तेर - तले, नीचे अधिकार में। होर—और। दा, दी और दे पंजाबी में का, की के विभक्तियों के स्थान में प्रयुक्त होती हैं। कबूल - (अ० क़बूल) स्वीकार होइसी—होगा।

२८ ह्याईं—इसी स्थान में। तकसी बकसी के साथ तकसी का प्रयोग है नष्ट करना।

२९—सैद - सैयद, मुसलमानों का एक वर्ग विशेष। रोझपट्टे—एक जंगली जानवर। जट्ट—जाट। ठाए स्थित। मसमुंद—(अ० मसदूद) बंद कर दी। चारों ओर से घेर ली।

३० असित (अश्वेत) काला। मतंग—मातङ्ग, हाथी। तबल - तबला, एक वाद्य विशेष।

इस छप्पय छन्द की अंतिम पंक्तियों में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

३१ पुठवार पृष्ठ भाग पीछे की ओर। छोह—क्षोभ-क्रोध ग्रह। रीसैं—ईर्ष्या, स्पर्धा। रैनचारी रात्रिचर, राक्षस। पलाइ पलायन, भाग गए।

३२—जम-किंकर—यमदूत। विफरे—उत्साह पूर्वक युद्ध करने लगे।

कुटे—कटे। फेरि बगद—दूसरी बार लौट कर। रेन—धूलि।

३३—चकत्ता—(अ० चगत्ता) दिल्ली के सम्राट् जो चग़ताई वंश के थे। अदेस—आदेश, आज्ञा। पर के सिर—शत्रु मुंड। भोर—प्रातः कालीन।

३४—इखलास—अ० मित्रता। सिताब—(फा० शिताब) शीघ्र। प्रमान—मान्य, स्वीकार।

३५—गाँठ्यौ दाबु—अवसर पकड़ा। मुस्तकीम—(अ० मुस्तक़ीम) दृढ़, सीधा, पक्का। टोइ—खोज कर, देख कर।

चतुर्थ अंग

३६—किसु—किस पर। नौगुन—यज्ञोपवीत। अमल—अ० अधिकार। बेअदबी—फा० आज्ञाभंग। जेर—(फा० ज़ेर) नीचे कर दो, दबा दो।

३७—दर—भय। मुझपै…सख्त—मैं आपत्ति में फँस गया हूँ। सुतर—ऊँट (फा० शुतर)।

३८—उत्ताल—तेज़, तीव्र। पयान—प्रयाण, गमन। फरवान—फरमान, आज्ञापत्र। रुक्का—पत्र।

३९—हरौलहि—एक पदाधिकारी कोतवाल। बहीर—डेरा आदि सामग्री। सूरज भुवसुत—सूर्य और मंगल। ज्योतिष का यह सिद्धान्त है कि यदि सूर्य और मंगल दोनों ग्रह एक राशि पर आ कर मिलें तो वर्षा नहीं होती। भूरज—(भूराज) पृथ्वी के राजाओं की।

४१—जुजवी—(फा० जुज़वी) थोड़ी। रेजा—(फा० रेज़ः) अंश टुकड़ा। गौर—रत्ता विचार ध्यान।

४२—खुसाल—(फा० खुशहाल)। खुस्पाल—सम्पन्न, प्रसन्न। चकवै—चक्रवर्ती। चौकस—सतर्क। खानौगे—नष्ट करोगे।

४३—कोरतें—कोल से। धरा धराके—पृथ्वी को धारण करने वाले।

४४—अरवैदल—अत्तयदल बड़ा भारी दल। तररानौ - सीधा। हरीक - (अ० हरीफ़) वैरी। लोक जोरू—स्त्री पुत्रों के साथ।

४५—चन्द्रभाल···सूरज लसिय, इस छप्पय छन्द में सूरज को सागर का रूप दिया गया है। सागर से निकले हुए चौदहों रत्नों की समता सूरज के भाल आदिक से दी गई है। सुरभोग अमृत। कंबु— शंख। कामद गाय—कामधेनु। लिन्निय - लेलीं। किन्निय—कर दिये। वंगस-सुत - अहमदखान पठान जिसके विरुद्ध युद्ध हो रहा था। चित्त चित्तिय चित्त में विचारने लगा।

४६—बुज्झे—समझे। जुज्झै—युद्ध करता। हमतौं अच्छे आप से हमारे आप के बीच शत्रुता नहीं है। दाया—झगड़ा।

४७—आटि—दाव कर। हयौ - मारा जायगा। थान—स्थान।

रुपे—अड़ गये। भपु—भक्ष्य, भोजन। धए - धाए, दौड़े। गच्छती - जाती हैं। जूंभा—जँभाई। तूव - (तू अव) तू इस समय।

५०—बहुर्‍यौ - फिरा। सीन - (फा० सीनः) वक्षस्थल। पाउ— पैर। किन्नो - कर डाला। सुधौं—सहित।

५१—नीहार—वर्फ, कुहरा। धुरवान—घनघटा। तड़ितान-बिजली।

५२—मंगल—तन्तामक ग्रह, युद्ध का अधिष्ठातृ देव। काल- जमन—एक राक्षस जिसके युद्ध की कथा अन्त में दी हुई है। मुचकुंद की नेत्र-ज्वाला से भस्म हो गया था। चाहिय—देखने लगा। गुलफ़— पैर की एक गाँठ। बधूक—बंधूक, एक पुष्प विशेष जिसका रंग लाल माना जाता है। दुपहरिया का फूल। ५३ हरयानी—हरी हो गई है। मगरूर—(अ० मग़रूर) गर्वीले, गर्वित। नरनुनाह—नरनाह, राजा। खगिय—डटा है। ५४—अनीक—सेना। मेंढ़ू—हाथरस जंक्शन स्टेशन का नाम ही मेंढ़ू है। भवनन्द—शिवसुत। दुख निकंद—दुःख दूर करने वाले।

५५—घनी मार—अधिक लोहा, अधिक मारकाट की।

पंचम जंग

५७—अनकम्प—स्थिर। कोस—कोष, भाण्डार। ओषधीस—चन्द्र। नत-प्रणाम। भवभच्छि—प्रलयकर्ता। नगरपुरहूत—नगर नृपति। ताखत -(फा० ताख्त) आक्रमण। मुखालिफ़ शत्रु।

५८-मुहीम (अ० मुहिम) आक्रमण। सनमुख सस -चन्द्र का सम्मुख होना यात्रा में शुभ माना जाता है।

५९—दरनि दर्वाजों पर। उछाहों-उत्साह के। तखत-तख्त, शासन। ढूँढ्यों—ढूँढ़ा। रवि राका मकरंद की— ।

६० वसु—आठ। पर-पूर शत्रु के नगर में।

६१—सच्छत -(सक्षत) घावों सहित। चौकस—सावधान।

६५—स्यानो-(सयाना) चतुर। ज्यौ—(जीव) प्राण। सनि आठे घर बैठ्यो-अष्टम स्थान में शनि मारकेश होता है।

६६-कनपानि—थोड़ा भी पानी। सौलों सौ तक। बलक्यौ—गर्वोन्नत मस्तक होके ऊँच स्वर से बात करना। भूजा-(भूजानि) राजा।

६७ पतीजै-विश्वास करता है। ताकीद-(अ० ताकीद)। अनुरोध। आज्ञा के साथ बात पक्की करना।

६८—पटल-तख्ता, लकड़ी। दहत-अग्नि, अनल। माधव-चैत्र मास। गुपत-गुप्त, छिपे ढंग से।

६९-जाम-(याम) प्रहर। टामक-वाद्य विशेष। गब्बर-पराक्रमी। सबर (अ० सब्र) सन्तोष। बाहला-बाह्य। विलुप्ता-नष्ट हो गये। मरहट्ट-मरघट।

७०-भभूके-आग की लपटें। निंगर-लड़के। कुड़िए-(पं०) लड़की। रावली-रावरी, आपकी। दोष विचारा-शत्रुता की। इस अंक में सूदन ने भयानक रस के परिपाक में वही कौशल दिखलाया है जो गोस्वामी तुलसीदासजी ने कवितावली के सुन्दर काण्ड में। जासुलियौ-जिसके लिये। भाई बंदन-भाई बन्धु। विलंदन-(फ़ा० बलंद) ऊँचा,

अधिक, अत्यन्त। आब-विजय, प्रतिष्ठा। नेरयो-पास आ गया है।

७१—दीनभयै...जीजे-शत्रु की शरण जा कर ही बहुत दिन जीवित रह सकते हैं। शत्रु की शरण जाने से मरण उत्तम है। ताकी-उसकी। करओड़ा हाथ फैलाना। टोहि-खोज कर, ढूँढ़कर। अराबौ-(अ० अराबः) भारवाही गाडियाँ, तोप ढोने वाली गाड़ी। कबीला-(अ० क़बीला) जाति लोगों का समूह, कुटुम्ब। बहलैं-एक प्रकार की छोटी गाड़ी। पिलौ-पिल पड़ो, कूद पड़ो।

७३-स्यौंत-सामान। दरसि-देखकर। उसारि-उठार।

७४-जुहे जोधे। औसान होश हवाश। पथ्थ-(पार्थ) अर्जुन। जूह-यूथ, समूह।

७५-छेव-अवसर। फतूह-(फा० फ़तूह) फ़तह (विजय) का बहु वचन।

षष्ठ अंग

७७-आरत-आर्त, पीड़ित इस छप्पय में दुर्गा द्वारा मारे गये असुरों के नाम हैं। पुरान-अठारह। गाँस-विरोध। नाचाखी-(तु० नाचाकी) फूट। दीवान दीवाने आम साधारण सभा। खिपाया-मार डाला।

७८-जद...तद-जब...तब। अहदी-(अ०) सरकारी नौकर। कायदा (क़ायदा) सम्मान। रफीक-अ० रफ़ीक)। साथी-मित्र।

७९-रहमति-(अ० रहमत) दया। मेंडी-मेंगी। सँभारिबा-सँभाला। अदब सम्मान कर।

८०-कलबट्ट-नष्ट भ्रष्ट। पनाह-शरण। मसको-मसखरी, दुर्व्यवहार। नूर (अ०) प्रकाश, चमक। आफ़रीं-(अ०) धन्य धन्य। कबूल-मानना, स्वीकार करना।

८१-कामनु बकस-काम बकसा। तमाम-(अ०) पूरा करना नरम बनाना। अदल-न्याय।